वाणी-पुस्तक-माला, संख्या—८

# श्रीव्यास-शुक-सम्वाद

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

# श्रीव्यास-शुक-सम्वाद।

( श्रीभारतधर्ममहामण्डल-काशीके-पूज्यपाद श्री१०८
स्वामीजी महाराजके लिखाये हुए
'परिशिष्ट' सहित। )

सम्पादक—
## गोविन्दशास्त्री दुगवेकर।

—०:॥:०—

प्रकाशक—
वाणी-पुस्तक-माला कार्य्यालय,
कार्याध्यक्ष—"आर्यमहिला"
जगत्गञ्ज, काशी।

—:॥:—

मुद्रक-
श्री पंडित बलदेवदत्त ठाकर
भारतधर्म प्रेस, बनारस।

द्वितीय संस्करण ] सन् १९२२ ई० [ मूल्य ।)

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

# पुराण-माला ।

—०:❀:०—

भारतीय आर्य स्त्री-पुरुषोंकी संस्कृतिका निर्माण करनेवाले पुराण हैं और पुराणोंने ही सनातनधर्म, आर्यसभ्यता और हिन्दूजातिको जीवित रक्खा है। पुराणोंके अध्ययन और प्रचारके लिये यह पुराणमाला आर्यमहिला हितकारिणी महापरिषद्‌के द्वारा निकाली जा रही है। इसमें सभी पुराण क्रमशः सभाष्य प्रकाशित होंगे। पुराणपाठकोंको पुराणोंके विषयोंके सम्बन्धमें अनेक शङ्काएँ हुआ करती हैं। आजतक पुराणोंपर कोई टीकाएँ या भाष्य ऐसे नहीं निकले हैं, जिनसे पुराणोंकी शङ्काओंका समाधान हो सके। हमारी पुराणमालाके साथ प्रत्येक पुराणका ऐसा भाष्य प्रकाशित हो रहा है, जिससे अनुकूल या प्रतिकूल किसी प्रकारके विचारके लोगोंको कोई शंका रह नहीं सकती। हिन्दुमात्रको इसे अपनाना चाहिये।

मैनेजर—

निगमागम बुकडिपो,

बनारस।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

ओंतत्सत् ।

# श्रीव्यास-शुक-संवाद ।

## भूमिका ।

—:*:—

अनादि, अनन्त, अपौरुषेय वेद ज्ञानमय है, और वह ११८० शाखाओंमें विभक्त है। पूर्व युगोंमें वह समस्त उपलब्ध था, किन्तु कराल कलिकालके प्रभावसे अब प्रायः लुप्त हो गया है। युगपरिवर्तन होनेपर वह फिर प्रकट होगा, इसमें सन्देह नहीं; किन्तु इस समय उसकी केवल छः सात शाखायें ही बच रही हैं। वेदके लुप्त होनेके अनेक कारण हैं। वैदिक दर्शनविज्ञानके अनुसार पुस्तकें पांच प्रकारकी होती हैं। यथाः—नाद पुस्तक, विन्दु पुस्तक, ब्रह्माण्ड पुस्तक, पिण्ड पुस्तक और अक्षरमयी पुस्तक। उनमेंसे अक्षरमयी पुस्तक नाशमान है। क्योंकि वह अक्षरोंमें लिखी जाती है। शेष चार पुस्तकें नित्य मानी गयी हैं। उनमेंसे नादमयी पुस्तक वेद ज्योंकेत्यों सृष्टिके आदिमें ऋषियोंके हृदयोंमें सुनायी देते हैं। स्मृति आदि पुस्तकें तथा पुराण आदि शास्त्र जो अन्य तीन प्रकारकी पुस्तकोंके अन्तर्गत माने गये हैं,

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

भावरूपसे ऋषियोंके अन्तःकरणोंमें प्रकट होते हैं। वैदिक सप्तदर्शनोंका प्रकाश वेदार्थं समझनेके लिये और सनातनधर्म-का रहस्य हृदयङ्गम करनेके लिये हुआ है, जो अब उपलब्ध हैं। इसीतरह वेदके भाष्यस्वरूप पुराणशास्त्रका अधिकांश भाग भी उपलब्ध है। परन्तु दार्शनिक-विज्ञान निगूढ़ तत्वोंसे भरा हुआ होनेके कारण वह विद्वानोंके ही विचारकी वस्तु बन गयी; सर्वसाधारणको उससे विशेष लाभ नहीं हुआ। तब भगवान् वेदव्यासने पुराणोंकी रचना कर सर्वसाधारणके लिये ज्ञानगंगा सुलभ कर दी। पुराणोंमें सम्पूर्ण वेदोंका ज्ञान ग्रथित है; ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदादिका सार संगृहीत है और दार्शनिक विज्ञानका जहां तहां विस्तृत रूपसे विवेचन किया गया है। पुराणोंने अभ्युदय और निःश्रेयसका सुलभ मार्ग बताकर जगत्का भारी उपकार किया है। मनुष्योंकी साधारण प्रवृत्ति निम्नगामी हुआ करती है। घर-गृहस्थीके मोहजालमें फँसा हुआ मनुष्य अपनी ऊर्द्ध्वगतिकी बात बहुत ही कम सोचता है। उसे एकाएक यदि वह बात सुझायी जाय, तो रुचिकर भी नहीं प्रतीत होती। इस बातको ध्यानमें रखकर पुराणकारने यह युक्ति निकाली कि, जड़-प्रपञ्चकी कथायें रोचकताके साथ कहते हुए मनुष्योंको उनके अन्तिम अध्यात्मलक्ष्यकी ओर अग्रसर कर दिया है। इससे साधारण पाठकोंका जी नहीं ऊबता और वे आप ही आप जड़-वादसे अपना चित्त हटाकर तत्वज्ञानके समझनेमें प्रवृत्त हो

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

जाते हैं। पुराणोंमें व्यवहार, राजनीति, सामान्यनीति, दार्शनिक विज्ञान, आचार-पालन, स्त्री-पुरुषधर्म, आर्य-अनार्य-धर्म, वर्णाश्रमधर्म, इतिहास, खगोल, भूगोल, पदार्थविद्या आदि सभी बातोंका समावेश हुआ ही है, किन्तु यह उनकी विशेषता है कि, अध्यात्मलक्ष्यका विचार सर्वत्र रक्खा गया है। जीवन-मरणके चक्रसे छूटनेका यही एकमात्र उपाय है और इस उपायको जाननेके लिये कलिकालमें एकमात्र पुराण ही अवलम्बन है। पुराणोंमें नहीं, ऐसा संसारमें कोई विषय ही नहीं है। पुराणपाठसे वृत्तियां उल्लसित और मन संतुष्ट होकर कर्तव्यपथ सूझने लगता है, तथा अन्तःकरणमें सत्व-गुणका उदय होकर मनुष्यजीवन सफल हो जाता है।

परन्तु पुराणपाठकोंको इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि, वे साधारण भाषामें नहीं लिखे गये हैं। समाधिभाषा, लौकिकभाषा और परकीयभाषाके द्वारा पुराणोंका विस्तार हुआ है। इसी तरह उनमें अधिदैवतत्व, अधिभूततत्व और अध्यात्मतत्व ओतप्रोत है। इन छहों विषयोंका विवेचन मार्कण्डेयपुराणकी टीकामें किया गया है। उनको समझ-कर ही पुराणपाठ करना उचित है। उनके न जाननेसे ही पुराणोंके सम्बन्धमें आधुनिक लोग शंका-कुशङ्कायें किया करते हैं। ऐसी शंकाओंका निरास करनेके लिये ही आर्य-महिला-पुराणमालामें गूंथे जानेवाले पुराणोंके अनुवादके साथ श्रीभारतधर्ममहामण्डलके व्यवस्थापक पूज्यपाद श्री १०८

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

स्वामीजी महाराज सर्ववादिसम्मत, सर्वसमन्वययुक्त, सर्वोपकारी अपूर्व टीका लिखा रहे हैं। किसी एक ही पुराणकी उनकी टीकाका अच्छी तरह अध्ययन कर लेनेपर पुराणोंके विषयमें शंका-कुशंका या तर्कवितर्कको अवकाश ही नहीं रह जाता। इस तरहकी सम्पूर्ण मार्कण्डेयपुराणकी टीका प्रकाशित हो गयी है और अब देवीभागवतकी टीका प्रकाशित हो रही है। इन टीकाओंसे जिज्ञासुओंकी सन्देहनिवृत्ति और सन्तुष्टि पूर्णरूपसे हो जायगी, इसमें अणुमात्र सन्देह नहीं है।

इस पुस्तिकामें प्रकाशित देवीभागवतकी यह गाथा कल्पकल्पान्तरकी घटनावलीसे सम्बन्ध रखती है और श्रीशुकदेवका जन्म, जिसका इसमें वर्णन आया है, वह देवीसृष्टिसे सम्बन्ध रखता है। इस कारण इस गाथामें कुछ कुछ वैचित्र्य प्रतीत होता है। पूज्यपाद महर्षिगण अपनी समाधिबुद्धिद्वारा त्रिकालके ज्ञाता होते थे। भूतकाल, भविष्यत्काल और वर्त्तमानकाल तीनों कालोंकी घटनावली वे समाधिदृष्टिद्वारा यदि देखना चाहते, तो देख सकते थे। इसी कारण अनेक कल्पकल्पान्तरकी इस लोककी घटनावली अथवा देवलोककी घटनावलीको वे अपनी योगदृष्टिद्वारा देखकर पुराणोंमें लिख गये हैं। उनको लौकिक इतिहास न समझा जाय। क्योंकि पुराणोंकी कोई गाथा किसी मन्वन्तरकी है अथवा किसी कल्पकी है और कोई गाथा किसी मन्वन्तरकी है और किसी कल्पकी है। अनन्तकोटि ब्रह्माण्डोंमेंसे हमारा यह ब्रह्माण्ड मरुभूमिके एक बालुकणके समान है। प्रत्येक ब्रह्माण्डमें एक भगवान् ब्रह्मा, एक भगवान् विष्णु और एक भगवान् शिव ईश्वर रूपसे रहते हैं। एक शिवके शासनकालमें अनेक विष्णु बदल

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

जाया करते हैं। इसी प्रकार एक विष्णुके शासनकालमें अनेक ब्रह्मा बदल जाया करते हैं और एक ब्रह्माके शासनकालमें अनेक इन्द्र और मनु बदल जाया करते हैं। ब्रह्माजीका एक दिन-रात कल्प कहा जाता है। एक कल्पमें चौदह मनु बदल जाते हैं। मनु कालके रक्षक और व्यवस्थापक हैं। एक मन्वन्तर ३०८५७१४२८ मनुष्यके वर्षोंका होता है और ऐसे ७१ मन्वन्तरका एक कल्प होता है। इसीसे अनुमान किया जा सकता है कि, भगवान् ब्रह्मा तथा भगवान् विष्णु तथा भगवान् शिवके शासन-कालका समय कितना महान् होता है। ऐसे कालके कल्प-कल्पान्तरकी गाथाका वैचित्र्यपूर्ण रूप होगा और वह मनुष्य-बुद्धिसे अगम्य होगा, इसमें सन्देह ही क्या है?

मनुष्यजीवनके अन्तिम साध्य मोक्षके दो मार्ग शास्त्र-कारोंने निर्णीत किये हैं। एक सांख्ययोग और दूसरा कर्म-योग। यद्यपि कर्मयोग-परायण सज्जन कर्मयोगका और सांख्ययोग-परायण सज्जन सांख्ययोगका अपनी अपनी रीतिसे समर्थन करते आये हैं; तथापि दोनों योग समानरूपसे ही मुक्तिकारी हैं। गीतामें भी कहा है:—

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥

परन्तु सांख्ययोग कर्मयोगकी अपेक्षा दुःसाध्य होनेसे, दोनोंके निःश्रेयसकर होनेपर भी, कर्मयोगकी महिमा विशेष-रूपसे गायी गयी है। यथाः—

"सन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥"

एकाएक कर्मसंन्यास कर देना साधकके लिये जितना

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कठिन होता है, उतना फलाकांक्षारहित निष्काम कर्म करते हुए उद्देश्यकी सिद्धि कर लेना कठिन नहीं है । यह बात भगवान् वेदव्यासने अपने प्रियपुत्र शुकदेवको श्रीदेवीभागवतमें समझायी है । परन्तु पिता-पुत्रका सम्बन्ध होनेसे मोहके कारण जब शुकदेवको उनका उपदेश नहीं जंचा, और वे सांख्ययोगपरही डँटे रहे, तब वही बात पुत्रके कल्याणार्थ अपने प्रिय शिष्य महाराज जनकके द्वारा उन्होंने शुकदेवके गले उतार दी । देवीभागवतका यह पितापुत्रसंवाद बड़ाही मधुर, विज्ञानपूर्ण और हृदयग्राही है । यह मधुर संवाद गृहस्थाश्रम, जो सब आश्रमोंका आश्रयदाता है, उसके सब प्रकारके कल्याणका अवलम्बन है । विषयवासनायुक्त, विषय-पङ्कमें फँसे हुए धनी तथा धनैश्वर्य-प्रभुत्वसम्पन्न राजाओं तकके लिये यह परम औषधिस्वरूप है और स्त्रीपुरुष सबके लिये समान हितकारी होनेसे सर्वसाधारणके उपकारार्थ उसे हम पृथक् पुस्तकाकार प्रकाशित कर रहे हैं । कर्मयोग और सांख्ययोगके तारतम्यका रहस्य इस पुस्तिकामें प्रकाशित पूज्यपादकी टीकासे भलीभांति समझमें आ सकता है और उससे विचारशील व्यक्ति अपना लक्ष्य तथा मार्ग स्थिर कर सकते हैं । इस पुस्तिकामें प्रकाशित विवेचनसे लाभ उठाकर साधक निःश्रेयस मार्गके पथिक होकर, सब व्यवहार करते हुए, श्रीआनन्दकन्द भगवत्पदारविन्दोंमें विलीन हों, यही हमारी आन्तरिक इच्छा है ।

यह ग्रन्थ वाणीपुस्तकमालाके ८वें पुष्प रूपसे प्रकाशित हो रहा है ।

निवेदिका—

विद्यादेवी ।

---

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

## श्रीदेवीभागवतान्तर्गत—

# श्रीव्यास-शुक-संवाद ।

पूज्यपाद महर्षि वेदव्यासका एक देवपद है। उन्हींके द्वारा अरणिसे महात्मा शुकदेवकी उत्पत्ति हुई थी। अरणिसम्भूत शुकदेव सभीको विस्मित करते हुए यज्ञ-स्थलमें घृताहुतिसे प्रदीप्त हुए दीप्तिमान् अग्निके समान शोभायमान होने लगे। * अपने पुत्रको देखकर अत्यन्त आश्चर्यचकित हो, व्यासदेव सोचने लगे कि, यह क्या है? बिना स्त्रीके मुझे पुत्र कैसे उत्पन्न हो गया? कुछ समय तक विचार करनेपर उन्हें निश्चय हुआ कि, भगवान् शङ्करके वरके प्रभावसे ही यह पुत्र उत्पन्न हुआ है। अरणिगर्भसम्भूत तेजोरूपी शुकदेव जन्मग्रहण करते ही अपने तेजसे अग्निके समान देदीप्यमान देख पड़ने लगे। दूसरे गार्हपत्य नामक अग्निके समान दीप्तिमान्, दिव्यतेजःपूर्ण, आनन्दमयमूर्ति पुत्रको व्यासदेव टकटकी लगाकर देखने लगे। हे तपस्वियो! उस समय गङ्गादेवीने हिमालयके शिखरसे वहां उतर कर

---

* यह दैवीसृष्टिका विषय है। जो साधारण बुद्धिसे समझमें नहीं आसकता है।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

अपने पवित्र जलसे शिशु शुकदेवकी अन्तरस्थ सब नाड़ियां धो डालीं और आकाशसे उनपर पुष्पवृष्टि होने लगी । व्यास-देवने उस महात्मा शिशुका जय जातकर्मादि संस्कार यथा-विधि किया, तब देवदुन्दुभि निनादित होने लगीं, अप्सराएँ नाचने लगीं और विश्वावसु, नारद, तुम्बरु आदि शुकदेवके दर्शनकी अभिलाषासे गान गाने लगे । समस्त देवता और विद्याधरसमूह अरणिगर्भसम्भूत दिव्यमूर्ति व्यासदेवतनयका दर्शन कर सानन्द चित्तसे उनका स्तवन करने लगे । हे द्विजवरो ! फिर अन्तरिक्षसे शुकदेवके लिये दिव्य दण्ड, कमण्डलु और कृष्णाजिन भूतलपर आ गिरा ।

अलौकिक दीप्तिमान् वालक शुकदेव उत्पन्न होते ही वृद्धिङ्गत हो चले । तब अशेष विद्या-विधानोंको जाननेवाले व्यास-देवने उनका यज्ञोपवीत संस्कार किया । जन्मते ही शुकदेवके हृदयमें, पिता व्यासदेवकी तरह, सरहस्य सब वैदिक संहि-ताएँ प्रकाशित हो गयीं । हे मुनिश्रेष्ठो ! शुकदेवकी उत्पत्तिके समय शुक-रूपधारिणी घृताचीको देख लेनेके कारण भगवान् वेदव्यासने पुत्रका नाम शुक ही रक्खा । व्यासतनय शुक-देव बृहस्पतिको उपाध्यायके पदपर प्रतिष्ठित कर यथाविधि ब्रह्मचर्य व्रतका अनुष्ठान करने लगे । थोड़े ही दिनोंमें मुनि-वर शुकदेव गुरुगृहमें रहकर समस्त रहस्यों और संग्रहों सहित चारों वेदों तथा धर्मशास्त्र आदिका अध्ययन कर और यथाविधि गुरुदक्षिणा देकर समावृत्त हो, अपने जनक

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कृष्णद्वैपायनके पास चले आये। पुत्र शुकको आते देख, व्यासदेव उत्सुकतासे खड़े हो गये और वारंवार प्रेमसे आलिङ्गन कर उनका सिर सूंघने लगे। पवित्रात्मा व्यासदेवने कुशलप्रश्न और अध्ययनसम्बन्धी बातें पूछ-कर समाधानपूर्वक उसी शुभमय आश्रममें रहनेके लिये शुकदेवसे कहा। अनन्तर व्यासदेव शुकदेवके विवा-हके सम्बन्धमें विचार करते हुए मन ही मन कहने लगे कि, चारों दिशाओंमें कोई मनोहररूपशालिनी मुनिकन्या कहाँ प्राप्त हो सकेगी? पुत्र शुकदेवसे भी उन्होंने कहा कि, हे महामते! तुमने सब वेदों और धर्मशास्त्र आदिका अध्ययन कर लिया है। अब हे अनघ! तुम दारपरिग्रह करो। हे पुत्र! लावण्यवती पत्नीको प्राप्त कर और गार्हस्थ्यधर्मका अवलम्बन कर, देवता और पितरोंकी अर्चना करते हुए मुझे पितृऋणसे मुक्त करो।

अपुत्रकी गति नहीं होती, वह कदापि स्वर्गगमनमें समर्थ नहीं हो सकता। अतः हे महाभाग! तुम गृहस्थाश्रमका स्वीकार करो। हे पुत्र शुक! तुम अवश्य ही गृहस्थाश्रमका अवलम्बन कर मुझे सुखी करो। हे महामते! मैं तुमसे बहुत कुछ आशा करता हूं। अब तुम उन आशाओंको पूर्ण करनेकी चेष्टा करो। हे महाप्राज्ञ शुक! मैंने अति कठोर तपस्या कर अयोनिसम्भव देवताके समान तुमको प्राप्त किया है। मैं तुम्हारा पिता हूं। मेरा परित्राण करना तुम्हारा

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कर्तव्य है। पुत्रको पास बैठाकर व्यासदेवके इस प्रकार कहनेपर संसारविरागी शुकदेवने अपने पिताको घोर संसारमें आसक्त देखकर कहा,—हे धर्मज्ञ ! आपने अपनी महान् बुद्धिके प्रभावसे वेदोंका विभाग किया है, फिर आप मुझसे ऐसी बातें क्यों करते हैं ? मैं आपका शिष्य हूं। आप मुझे ऐसा यथार्थ उपदेश दें, जिससे मैं आपकी आज्ञाका पालन कर सकूं। व्यासदेव बोले,—हे पुत्र ! मैंने तुम्हारी प्राप्तिके लिये सौ वर्षोंतक कठोर तपस्याके क्लेश सहकर भगवान् शङ्करको प्रसन्न किया था और उसीके फलस्वरूप तुमको पाया है। हे महाप्राज्ञ ! मैं किसी भूपतिसे कहकर तुम्हें गृहस्थीके लिये विपुल धन दे सकता हूं। तुम इस प्रार्थनीय यौवन-कालमें संसारसुखका उपभोग करो। पिताकी ये बातें सुनकर शुकदेवने कहा,—हे तात! भला आप ही बताइये कि, इस मनुष्य-लोकमें ऐसा कौनसा सुख है, जिसमें दुःखका लवलेश भी न हो ? ज्ञानी पुरुष तो दुःखमिश्रित सुखको सुख ही नहीं कहते।

हे महाभाग ! मैं यदि किसी रमणीका पाणिग्रहण कर लूं, तो अवश्य ही उसके वशीभूत हो रहूंगा ! फिर भला पराधीन, विशेषतः स्त्रैण ( स्त्री-लम्पट ) पुरुषको सुख कहाँ ? लोहे अथवा काठकी बेड़ी जिसके पैरमें पड़ी हो, उसका कभी न कभी उससे छुटकारा होनेकी सम्भावना भी रहती है; परन्तु स्त्री-पुत्रादिके पाशमें बँधे हुए पुरुषका कदापि छुटकारा हो नहीं सकता। विष्ठा और मूत्रसे

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

तो सभीके शरीर बने हैं, परन्तु स्त्रीका शरीर तो आपाततः उसीसे भरा रहता है। अतः हे विप्रेन्द्र! किस ज्ञानी व्यक्तिका रमणीके शरीरमें प्रेम हो सकता है? विशेषतः जब मैं अयोनिसम्भूत हूं, तब योनिमें मेरी प्रीति कैसे होगी? हे विप्रर्षे! केवल इस जन्ममें नहीं, पूर्वजन्मोंमें भी मैंने कभी योनिसे उत्पन्न होनेकी इच्छा नहीं की। अनुपम आत्मतत्वके सुखका उपभोग करना छोड़, मैं विष्ठाके सुखका उपभोग करनेमें कैसे प्रवृत्त होऊँ? आत्माराम महात्मा कभी विषय-भोगके सुखके लिये लोलुप नहीं होते। मैंने पहिले जब सम्पूर्ण वेदोंका विस्तारपूर्वक अध्ययन किया, तब ही समझ लिया कि, वे सब कर्ममार्गप्रवर्त्तक हिंसामय शास्त्र हैं। फिर यथार्थ ज्ञानकी प्राप्तिके लिये बृहस्पतिको गुरु बनाकर देखा; परन्तु वे भी विषम अविद्याग्रस्त और मायामय घोर संसारसागरमें निमग्न जान पड़े। मैं समझ गया कि, उनसे भी मेरा परित्राण हो नहीं सकता। वैद्य जिस प्रकार स्वयं रोगी होनेपर अन्य व्यक्तिके रोगकी चिकित्सा करनेमें असमर्थ हो रहता है, उसी प्रकार जब कि, मैं मुमुक्षु हूँ, तब घोर गृहासक्त गुरु मेरे भवरोग-की चिकित्सा कैसे कर सकेगा? वह तो केवल विडम्बनामात्र है।

गुरुदेवको प्रणाम कर और उनसे अनुज्ञा लेकर मैं आपके निकट आ गया हूं। संसार सर्पसे मैं डरा हुआ हूं। अब आप मेरी रक्षा कीजिये। इस महाघोर संसारक्षेत्रमें दिन रात जीव नक्षत्रचक्रमें घूमते हुए तारोंकी

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

तरह भटकते रहते हैं। सूर्यकी तरह उन्हें कभी विश्रान्तिसुख नहीं मिलता। हे तात! आत्मतत्वका विचार करनेसे ज्ञात पड़ता है कि, संसारमें कुछ भी सुख नहीं है। कीट जैसे विष्ठामें ही सुखका अनुभव करते हैं, वैसे ही मूढ़ लोग संसारमें सुख-भोग करते रहते हैं। वेदादि शास्त्रोंका अध्ययन करनेपर भी जो संसारमें आसक्त हैं,-घोड़ों, सूअरों और कुत्तों जैसे मोहान्ध हैं,—उनसे बढ़कर कोई मूर्ख हो नहीं सकता। दुर्लभ मनुष्य-जन्म प्राप्त कर और वेदादि शास्त्रोंका अध्ययन कर लेनेपर भी यदि मनुष्य संसारमें आबद्ध हो जाय, तो संसारमें मुक्त कौन होगा? स्त्री, पुत्र और गृहादिमें जिनके हृदय आसक्त हो गये हैं, उनको भी यदि पण्डित कहा जाय, तो इससे अधिक आश्चर्यका विषय क्या हो सकता है? जो मनुष्य संसारमें त्रिविध माया-गुणसे आबद्ध नहीं हैं, वे ही विद्वान् और मेधावी हैं तथा उन्होंने ही यथार्थरूपसे शास्त्रोंका मर्म समझा है। इस मायामय संसारमें दृढ़रूपसे बन्धन कर देनेवाले शास्त्राध्ययनका प्रयोजन ही क्या रह जाता है? जिसके द्वारा भवबन्धनसे छुटकारा हो जाय, उसी शास्त्रको पढ़ना उचित है। पुरुषको दृढ़रूपसे आवद्ध करनेके लिये ग्रहण कर लेता है, इसीसे घरका नाम गृह है। अन्ततः बन्धनागारस्वरूप गृहमें मुझे सुख क्या होगा? हे पिताजी! मैं इसीसे डर रहा हूं। जो विद्वान् मतिमन्द हैं और जिन्हें विधाताने ठगा है, वे ही मानवजन्म ग्रहण करनेपर भी पुनः बन्धन दशाको प्राप्त होते हैं।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

व्यास बोले,—हे पुत्र ! गृह कभी बन्धनागार नहीं और न बन्धनका कारण ही हो सकता है। जिस व्यक्तिका चित्त संसारमें आसक्त नहीं होता, वह गृहस्थ होनेपर भी मुक्तिलाभ कर सकता है। सत्यवादी पवित्रात्मा गृहस्थ न्यायानुसार अर्थोपार्जन कर, वेदोक्त कर्म और श्राद्धादि यथाविधि करता रहे, तो वह अवश्य ही मुक्तिलाभ करनेमें समर्थ हो सकता है। क्या ब्रह्मचारी, क्या संन्यासी, क्या वानप्रस्थाश्रमी और क्या अन्य प्रकारके आचारोंका पालन करनेवाले, सभी मध्याह्नके पश्चात् गृहस्थकी उपासना करते हैं। गृहस्थाश्रमका अवलम्बन किये हुए लोग धर्मपरायण व्यक्तियोंका मधुर वचन और श्रद्धापूर्वक अन्नदानसे उपकार किया करते हैं। गृहस्थाश्रमसे उत्कृष्ट कोई धर्म न मैंने कभी देखा, न सुना ही है। इसीसे वशिष्ठादि आचार्योंने महाज्ञानी होते हुए भी गार्हस्थ्यधर्मका आश्रय किया है। हे महाभाग ! यथाविधि वैदिक कर्मोंका अनुष्ठान करते रहनेपर मनुष्यको कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता। सत्कुलमें जन्म, स्वर्गभोग या मोक्ष, गृहस्थ जिसकी इच्छा करता है, वही साध ले सकता है। फिर भी शास्त्रका यह कोई नियम नहीं है कि, मनुष्य आजीवन एक ही आश्रममें बना रहे। धर्मवेत्ता पण्डितोंका मत है कि, समयानुसार मनुष्यको एक आश्रमसे दूसरे आश्रममें चले जाना चाहिये। अतः हे वत्स ! तुम अग्निग्रहणपूर्वक निरलस होकर कर्तव्य

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कर्मका आचरण करनेमें प्रवृत्त हो जाओ। हे पुत्र! तुम गृहस्थाश्रममें प्रविष्ट होकर यथाविधि देवता, पितर और मनुष्यादिको तृप्त करते हुए पुत्रोत्पादन कर गार्हस्थ्यसुखका उपभोग करो। अवस्था ढलनेपर घर छोड़कर वनमें चले जाओ और वहाँ वानप्रस्थाश्रमका अवलम्बन कर उत्कृष्ट व्रतोंका अनुष्ठान करो तथा अन्तमें संन्यासाश्रमको स्वीकार कर लो। हे महाभाग! जो मनुष्य विवाह नहीं करते, उन्हें अवश्य ही दुरन्त चक्षु आदि बहिरिन्द्रिय, अन्तरिन्द्रिय और मन उन्मत्त कर देता है। हे महामते! इसीसे शास्त्रज्ञ लोग कहते हैं कि, बलवान् इन्द्रियोंके उत्पीड़नसे बचनेके लिये यौवनकालमें विवाह और वृद्धावस्थामें तपोनुष्ठान करना चाहिये। हे महाभाग! पूर्वकालमें राजर्षि विश्वामित्र इन्द्रिय-संयमपूर्वक निराहार रहकर, तीन सहस्र वर्षतक कठोर तपस्या कर, महान् तेजस्वी होते हुए भी वनमें मेनकाके रूपपर मोहित हो गये! उन्हींके वीर्य और मेनकाके गर्भसे शकुन्तला नामकी कल्याणमयी कन्याने जन्म ग्रहण किया था। मेरे पिता महातपस्वी पराशर भी धीवरकन्या कालीको देखते ही कामबाणसे पीड़ित हो गये। नौकापर ही उन्होंने उससे सम्भोग किया। अधिक क्या कहूं, भगवान् ब्रह्मा अपनी ही कन्या सन्ध्याको देखकर कामार्त्त होकर उसके पीछे दौड़ पड़े। तब भगवान् रुद्रने हुङ्कार शब्दसे उनको मूर्छित कर उस कुकर्मसे परावृत्त किया। अतः हे कल्याणास्पद! तुम मेरे

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

हितकर वचनोंको मानकर किसी सत्कुलमें उत्पन्न हुई कन्याका पाणिग्रहण कर वेदमार्गके अनुयायी बनो।

शुकदेव बोले,—पिताजी! मेरी किसी प्रकार गृहस्थी करनेकी इच्छा नहीं है। क्योंकि मैं समझ चुका हूँ कि, स्त्री-सम्बन्ध सभी जीवोंको पगहेकी तरह बन्धनस्वरूप और सर्वदा दुःखदायी है। हे तात, जो धन-चिन्ताके फेरमें पड़ गये हैं, ऐसे गृहस्थ सुखी कहां देख पड़ते हैं? धनलोलुप और दरिद्र व्यक्तियोंको उन्हींके आत्मीय लोग पीड़ा दिया करते हैं। जो त्रिलोकका अधीश्वर है, वह इन्द्र भी निःस्पृह भिक्षुओंकी तरह सुखी नहीं है। फिर इस संसारमें अन्य कौन सुखी हो सकता है? जब कोई तपस्वी कठोर तपस्या करने लगता है, तब सुरलोकका अधीश्वर इन्द्र दुःखित होकर उस तपस्वीके तपमें नाना प्रकारके विघ्न उपस्थित करता है। ब्रह्मा भी संसारी होकर सुखी नहीं हैं। भगवान् विष्णु सर्वैश्वर्यकी अधीश्वरी मनोरमा कमलाको प्राप्त करके भी निरन्तर असुरोंके साथ संग्राम करके क्लेश भोगा करते हैं और लक्ष्मीपति तथा श्रीमान् होते हुए भी बहुत यत्नके साथ प्रायः कठोर तपस्या किया करते हैं। तब आपही बताइये कि, इस संसारमें चिरन्तन सुख किसको मिला है? मैं जानता हूं कि, भगवान् शङ्कर भी निरन्तर दुःख भोगते रहते हैं। क्योंकि उन्हें भी प्रायः कठोर तप और दैत्योंके साथ युद्ध करना पड़ता है। इसीसे कहता हूं कि, हे तात! संसारी

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

व्यक्ति धनवान् होकर भी जब धन-लालसाके कारण सुखसे नहीं सोता, तब यदि कोई संसारी निर्धन हो, तो उसे सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? हे महाभाग ! संसारतत्वको जानकर भी आप इस हतभाग्य औरस पुत्रको निरन्तर दुःख देनेवाले महाघोर संसारक्षेत्रमें क्योंकर नियोजित करना चाहते हैं ?

पिताजी ! सांसारिक दुःखोंका कहांतक वर्णन करूं ? जन्मकालमें दुःख, वृद्धावस्थामें दुःख, मरणसमयमें दुःख, पुनः विष्ठा-मूत्रमय गर्भवासमें निदारुण दुःख, यह तो दुःखपरम्परा बनीही हुई है; किन्तु इन सब दुःखोंसे बढ़कर तृष्णा तथा लोभसे जो दुःख होता है, वह बड़ाही भीषण है और उससे भयानक याचना-सम्बन्धी दुःख तो मृत्युसे भी गुरुतर है । हा ! प्रतिग्रहके अतिरिक्त ब्राह्मणोंके लिये धनोपार्जनका कोई उपाय नहीं है और वे प्रतिग्रह किये बिना बुद्धिबलसे अन्य कोई उपाय कर धनसम्पादनपूर्वक जी भी नहीं सकते । अतः ब्राह्मणोंको प्रतिदिन दूसरोंके मुँहकी ओर ताकते हुए मरणतुल्य दुःख भोगना पड़ता है । यह क्या कम आक्षेपकी बात है ? ब्राह्मणोंको समस्त वेदों और धर्मपुस्तकोंका अध्ययन और ज्ञानोपार्जन कर लेनेपर भी धनिकोंके पास जाकर सर्वप्रयत्नसे उनकी स्तुतिके गीत गाने पड़ते हैं । हे तात ! यदि गृहस्थीमें न फँसा जाय, तो एक पेटकी चिन्ताही क्या रह जाती है ? मनमें सन्तोष रहे, तो फल, मूल, पत्तों आदिसे किसी प्रकार इसको भर दिया जा सकता

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

है; परन्तु भार्या, पुत्र, पौत्र आदि अनेक पोष्य कुटुम्बी होनेपर सबके उदर-पूरणके लिये बड़ाही दुःख भोगना पड़ता है। संसारमें परमसुख कहां देखा जाता है? अर्थात् कहीं नहीं। इसलिये हे पिताजी! आप मुझे परमसुखकर योगशास्त्र और तत्वज्ञानविषयक शास्त्रोंकी शिक्षा दीजिये। कर्मकाण्डमें मेरे चित्तको कभी कदापि सन्तोष नहीं होगा।

जन्म मृत्यु आदि अशेष क्लेशोंको देनेवाले सञ्चित, प्रारब्ध और क्रियमाण तीनों प्रकारके कर्मोंका मूल अविद्या है। उसका जिससे विनाश हो, ऐसा कोई कर्मक्षयका उपाय बताइये। कामिनी स्त्रियां जोंककी तरह पुरुषोंका रक्त लगातार चूसा करती हैं, यह बात मूर्खोंके ध्यानमें नहीं आती। क्योंकि वे रमणियोंके हावभाव आदिको देखकर उनपर लट्टू हो रहते हैं। पुरुष जिसे कान्ता समझते हैं, वही कान्ता सम्भोग-सुख प्रदान करते समय वीर्यका और कुटिल प्रेमालापसे मन और धन आदि सर्वस्वका अपहरण किया करती हैं। रमणियोंसे बढ़कर दूसरा चोर कौन हो सकता है? मेरी समझमें मूर्ख लोगही विधातासे ठगे जाकर अपने निद्रासुखको बिगाड़नेके लिये दार-परिग्रह (विवाह) किया करते हैं। वे यह नहीं समझते कि, रमणियां कदापि सुखकी नहीं, किन्तु दुःखको ही कारण हुआ करती हैं।

सूतने कहा,—शुकदेवकी ये बातें सुनकर अब क्या करना चाहिये, यह सोचते हुए व्यासदेव चिन्तासागरमें डूब गये। उस

२

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

समय अत्यन्त दुःखके कारण उनकी आंखोंसे अविरत आंसू झरने लगे, सब शरीर कांपने लगा और मनमें बड़ीही ग्लानि हुई। पिताको इस प्रकार दीनभावापन्न और शोकार्त्त देखकर शुकदेवकी आंखें विस्मयसे तन गयीं और बोले,—अहो! मायाका क्या ही प्रबल प्रताप होता है। जिनके वचनको लोग वेदतुल्य समझकर सादर ग्रहण करते हैं, जो वेदान्तदर्शनके प्रणेता हैं और कोई विषय जिनसे छिपा हुआ नहीं है, वे सब तत्वोंके जाननेवाले, पण्डितप्रवर, व्यासदेव भी उसके प्रभावसे मोहित हो गये हैं। ब्रह्मविद्याविशारद सत्यवतीपुत्र व्यासदेवको भी जो मोहित करनेमें समर्थ है, ज्ञात नहीं होता कि, उक्त मायाका स्वरूप क्या है और यह भी निश्चय नहीं किया जा सकता कि, कैसे कठिन यत्नसे उसकी साधना की जाय। हा! जो अठारह पुराणों और महाभारतके प्रणेता हैं तथा जिन्होंने वेदके विभाग कर दिये हैं, वे वेदव्यास आज मायाके चक्रमें पड़कर अकुला रहे हैं! औरोंकी तो बात ही क्या है? जिसने ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि सहित अखिल जगत्को ही मुट्ठीमें कर रक्खा है, उसके प्रभावसे जो मुग्ध न हो जाय, ऐसा त्रिभुवनमें कौन हो सकता है? अतः अब मैं उसी अन्तर्यामिनी देवी मायाके ही शरणापन्न होता हूं। अहो! महामायाकी क्या ही अद्भुत शक्ति है? उसने अपनी मायाके प्रभावसे सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, ईश्वरको भी वशीभूत कर लिया है। पुराणवेत्ता पण्डितगण कहा करते हैं कि, व्यासदेव

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् विष्णुके अंशसे उत्पन्न हुए हैं; परन्तु क्या आश्चर्य है कि, फूटी हुई नौकावाले व्यापारीकी तरह वे मोह-सागरमें मग्न हो रहे हैं। हा! मायाकी क्या ही अद्भुत क्षमता है! जिसके वशमें चले जानेसे सर्वज्ञ व्यासदेव आज प्राकृत मनुष्योंकी तरह आंसू वहा रहे हैं! अब मैं जान गया हूं कि, तत्वज्ञ विद्वान् भी मायाके वलका अतिक्रमण करनेमें समर्थ नहीं हो सकते! मायाके वलसे कैसी अद्भुत भ्रान्ति उत्पन्न हो जाती है! वास्तवमें ये कौन और मैं कौन? हम यहां किस लिये आये हैं, इसका निश्चय न रहनेपर भी पञ्चभूतमय नश्वर देहके सम्बन्धसे ये पिता हैं और मैं पुत्र हूं, ऐसी भावना कर रहे हैं! द्विजवर महर्षि कृष्णद्वैपायन भी जब मायासे अभिभूत होकर रोदन कर रहे हैं, तव यह निश्चित है कि, मायाकी शक्ति सबसे अधिक है। महामायावी लोग भी इसके आगे मुग्ध हो जाते हैं। अरणिसम्भूत शुकदेवने इस प्रकार सोचकर ब्रह्मादि समस्त देवताओंको उत्पन्न करनेवाली और नियन्त्री तथा समस्त कारणोंकी भी कारण-स्वरूपा देवी महामायाको मनही मन प्रणाम कर, शोकसागरमें निमग्न, नितान्त दीनभावापन्न, पिता वेदव्याससे इस प्रकार कल्याणकर और युक्तियुक्त वचन कहा कि, पिताजी! आप परमभाग्यशाली हैं। क्योंकि आप महात्मा पराशरके पुत्र होकर स्वयं सब तत्वज्ञानके उपदेष्टा हैं। फिर हे नाथ! आप प्राकृत मनुष्योंकी तरह मोहमें पड़कर क्यों शोक कर रहे हैं? हे महा-

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

भाग! उत्तम महात्मा होकर भी आपको ऐसी विषम भ्रान्ति क्यों हो रही है? देखिये, सम्प्रति मैं आपका पुत्र हूं; परन्तु ज्ञात नहीं कि, पूर्वजन्मोंमें आप मेरे कौन थे और मैं आपका कौन था? हे महामते! आप अपने ज्ञाननेत्रोंको खोलकर धैर्य धारण करें और चित्तको वृथा विषादसागरमें न डाल दें। इस अखिल ब्रह्माण्डको ही मोहजाल समझकर शोक करना छोड़ दें। आप पुत्रके मोहसे ऐसे कातर क्यों हो रहे हैं? भूख लगनेपर भक्ष्य वस्तुसे और प्यास लगनेपर जलसे ही शान्ति होती है। पुत्रको देखकर भूख-प्यास नहीं मिटती। इसी तरह सुगन्धिके सूँघनेसे घ्राणेन्द्रिय और सुमधुर सङ्गीत आदिके सुननेसे श्रवणेन्द्रियको सुख होता है। स्त्रीसम्भोगके सुखकी इच्छा होनेपर स्त्रीसहवाससे ही वह पूर्ण होती है। पुत्रसे भला किस सुखकी आशा की जा सकती है? मैं आपका पुत्र होकर भी क्या करूँगा? पुत्र आत्मसुखका कारण नहीं है। इसीसे पहिले दरिद्र द्विजवर अजीगर्तने यज्ञके लिये नरवलि चाहनेवाले राजा हरिश्चन्द्रसे इच्छित द्रव्य लेकर अपने औरस पुत्रको दे डाला था। सारांश, इस जगत्में आवश्यक धन ही सुखका साधन है और केवल धन ही सब सुखोंका साधन होनेसे सब लोग नानाप्रकारके धनका सञ्चय किया करते हैं। अतः यदि आपको सुखभोगकी लालसा हो, तो आप धनोपार्जन कीजिये। मेरे (पुत्रके) रहनेसे आपका कौनसा काम बनेगा? हे मुनिवर! आप परम

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

सूक्ष्मदर्शी और महान् बुद्धिमान् हैं। अतः मैं प्रार्थना करता हूं कि, आप पुत्र जानकर मुझपर कृपा करें और अपने बुद्धि-बलसे मेरे ज्ञाननेत्रोंको खोल दें; जिससे मैं गर्भवासके भयसे छुटकारा पाकर सदाके लिये मुक्त हो सकूं। हे निष्पाप! पहिले तो इस कर्मभूमि भारतवर्षमें मनुष्य-जन्म पाना ही दुर्लभ है। फिर पवित्र ब्राह्मण-कुलमें जन्म पाना तो उससे भी कितना अधिक दुर्लभ है, यह कहा नहीं जा सकता। अन्ततः इस प्रार्थनीय मानव-वंश और ब्रह्मकुलमें जन्म पाकर उसे मैं वृथा क्यों नष्ट कर डालूं? पिताजी! दीर्घकालतक ज्ञानवृद्ध गुरुजनकी सेवा करनेपर भी मैं संसार-पाशमें ही फँसा हुआ हूँ। संसारवासनाजालमें फँसी हुई और अज्ञानके अन्धकारमें डूबी हुई बुद्धिवृत्ति किसी प्रकार चित्तसे नहीं हटती।

सूतने कहा,—अमितबुद्धिशाली पुत्र शुकदेवकी ये बातें सुनकर और उसे संन्यासाश्रममें अत्यन्त आसक्त तथा प्रशान्तचित्त देखकर व्यासदेव बोले,—हे पुत्र! यदि तुम्हारी यही बुद्धि है, तो तुम परमकल्याणप्रद द्वितीय वेदके समान, मेरे रचे हुए भागवत पुराणका, जो बहुत बड़ा नहीं है, अध्ययन करो। अन्यान्य पुराणोंकी तरह इसमें भी सर्ग, प्रतिसर्ग आदि पुराणोंके पांचों लक्षण सुस्पष्ट हैं, और यह बारह स्कन्धोंमें विभक्त हुआ है। इस भागवतके श्रवणमात्रसे एकमात्र ब्रह्म ही सत् है और समस्त जगत् असत् है, इस प्रकारका परोक्ष और

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

अपरोक्ष ज्ञान हो जाता है । इसीसे मेरी समझमें यह भागवत अन्यान्य सब पुराणोंका भूषणस्वरूप है । हे महा-मते ! तुम इस पुराणको पढ़ो । हे वत्स ! पूर्वकल्पके अन्तमें बालमूर्तिधारी भगवान् श्रीहरि जब प्रलयकालके जलमें तैरते हुए वट-पत्रपर पड़े पड़े सोच रहे थे कि, किस चिन्मयी व्यक्तिने मुझे ऐसी बालमूर्तिमें सृजन किया है ? मुझे उत्पन्न करनेमें उसका उद्देश्य क्या है ? किन द्रव्योंसे मैं बनाया गया हूं ? इन सब बातोंको मैं किस उपायसे जान सकूंगा ? तब चैतन्यरूपिणी देवी भगवतीने उक्त प्रकारसे चिन्तामें पड़े हुए महात्मा भगवान् श्रीहरिसे आकाशवाणीके द्वारा श्लोकार्धसे यह बात कही कि, परिदृश्यमाण जो कुछ है, वह सब मैं हूं । मेरे अतिरिक्त अन्य कोई सत् वस्तु चिरस्थायी हो नहीं सकती।

उस आकाशवाणीको प्रथम मनमें ठीक बैठाकर विष्णु-भगवान् सोचने लगे कि, यह सत्य वचन किसने सुनाया है ? मैं कैसे जानूं कि, यह वचन कहनेवाला पुरुष है, स्त्री है या नपुंसक ? बहुत देरतक सोचनेपर भी जब वे कुछ निर्णय नहीं कर सके, तब हृदयमें ग्रथित भगवतीके उक्त वाक्यका तद्गतचित्तसे बार बार जप करने लगे । जब वटपत्रपर पड़ें हुए श्रीहरि उस वाक्यके तत्वको जाननेके लिये बहुत ही व्याकुल हो उठे, तब सर्वमङ्गलमयी चारुवदना देवी भग-वती प्रशान्तमूर्ति सत्वगुणमयी महालक्ष्मीके रूपमें, अपनी विभूतिस्वरूप समान वयस और रूपवाली सखियोंसे घिरकर,

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

दिव्य अलंकारोंसे सजकर, दिव्य वस्त्रोंको धारण कर, चार हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म लेकर, मन्द हास्य करती हुई अमिततेजा भगवान् विष्णुके सम्मुख आविर्भूत हो गयीं। प्रलयजलके ऊपर निराधार रूपसे खड़ी हुई मनोरमा उस देवीको देखकर कमललोचन विष्णु मनमें बड़े ही आश्चर्य-चकित हुए। उन्होंने देखा कि, उस महादेवीके चारों ओर रति, भूति, बुद्धि, मति, कीर्त्ति, स्मृति, धृति, श्रद्धा, मेधा, स्वधा, स्वाहा, क्षुधा, निद्रा, दया, गति, तुष्टि, क्षमा, लज्जा, जृम्भा, तन्द्रा प्रभृति सब शक्तियां मूर्तिमती होकर पृथक् पृथक् भावसे अवस्थित हैं। उन सबके हाथोंमें दिव्य आयुध, कण्ठोंमें मोतियोंके हार और मन्दारमालायें तथा सब अङ्गोंमें दिव्य अलंकार सुशोभित हो रहे हैं। उस एकार्णव जलमें देवी महालक्ष्मी और उसकी शक्तियोंको देखकर सर्वात्मा भगवान् विष्णु अत्यन्त विस्मित होकर सोचने लगे कि, क्या मैं यह कोई माया देख रहा हूँ? कहांसे ये सब रमणियां आविर्भूत हो गयीं? मैं भी कहांसे आकर इस वटपत्रकी शय्यापर सो रहा हूं? इस घोर एकार्णवमें वटवृक्ष कैसे उत्पन्न हो गया? मुझे किसने सुन्दर शिशुरूपमें ढालकर इस स्थानमें सुला दिया? ये क्या मेरी माता हैं? नहीं तो यह अघटनघटनापटीयसी किस प्रकारकी माया है? मुझे इस समय इसने क्योंकर दर्शन दिया? ये ऐसे ही किसी निगूढ़ कारणसे ऐसा किया करती हैं? इस समय इनसे मैं

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

क्या कहूं ? क्या अब मुझे अन्यत्र कहीं चला जाना चाहिये ? अथवा बालभावके कारण मैं जैसा हूं, वैसा ही अतन्द्रित-भावसे चुप मारकर यहीं पड़ा रहूं ?

व्यासदेव बोले,—फिर वटपत्रपर पड़े हुए देव जना-र्दनको विस्मयमें पड़े देखकर देवी महालक्ष्मीने हँसते हुए कहा,—हे विष्णो ! तुम ऐसे विस्मयमें क्यों पड़े हो ? इससे पहिले अनादिकालसे कितनी ही वार प्रलय हुआ और सृष्टि हुई । प्रत्येक सृष्टिके प्रारम्भमें तुम आविर्भूत हुए और प्रत्येक वार मैं भी तुम्हारे साथ मिली । किन्तु इस समय उस महाशक्तिके प्रभावसे तुम मुझे भूल रहे हो । वह परमा महाशक्ति सब गुणोंसे अतीत है । हम तुम सगुण हैं । जगत्में जो सात्विकी शक्ति महालक्ष्मीके नामसे प्रसिद्ध है, वह मुझको ही जानो । अब इसके उपरान्त तुम्हारे नाभिकमलसे सब लोकोंकी सृष्टि करनेवाले रजोगुणमय प्रजापति ब्रह्मा उत्पन्न होंगे । उत्पन्न होते ही वे कठोर तपस्या कर सृष्टिके उपयोगी, जिससे उत्तम कोई हो नहीं सकती, ऐसी शक्ति प्राप्त करेंगे और रजोगुणके द्वारा तीनों लोकाका सृजन करेंगे । महामति प्रजापति प्रथम सगुण पञ्चमहाभूतोंको उत्पन्न कर, फिर सब इन्द्रिय, मन और उन सबकी अधिष्ठात्री देवताओंका सृजन करेंगे और इसी उपकरण ( साधन ) को लेकर समस्त जगत्की रचना करेंगे । इसीसे उन्हें सब कोई इस विश्व-ब्रह्माण्डके सृष्टिकर्ता कहा करते हैं । हे महाभाग ! तुम

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

इस विश्वके पालनकर्ता होगे। प्रजापति ब्रह्मा अपने चारों मानसपुत्रोंपर सृष्टिके प्रारम्भमें जब क्रुद्ध होंगे, तब उनकी भौंहोंके बीचसे रुद्रदेव प्रादुर्भूत होंगे। रुद्रदेव उत्पन्न होते ही कठोर तपस्या कर महाकाली नामक तमोगुणमयी संहार-शक्तिको प्राप्त करेंगे और कल्पान्तके समयमें वे ही अखिल भौतिक जगत्‌का संहार करेंगे। हे महामते! सृष्टिका आदि-कारण मैं हूं, इसीसे मैं तुम्हारे पास आयी हूँ। अब तुम मुझे अपनी सत्वगुणमयी वैष्णवीशक्ति समझो। हे मधुसूदन! मैं तुम्हारे हृदयमन्दिरका आश्रयकर निरन्तर तुम्हारे ही पास रहा करूँगी। यह सब सुनकर भगवान् विष्णुने कहा,—हे देवि वरारोहे! मैंने इससे पहिले जो बहुत ही स्पष्ट श्लोकार्ध सुना था, उसमें बहुत ही कल्याणकर रहस्य भरा हुआ है। वह श्लोकार्ध किसने कहा था? हे वरानने! इस बातको सबसे पहिले कहो; क्योंकि उससे मेरे मनमें अत्यन्त संशय उत्पन्न हुआ है। अधिक क्या कहूं, दरिद्र व्यक्ति जिस प्रकार निरन्तर धनकी ही चिन्ता किया करता है, उसी प्रकार मैं भी बार-बार उसीका स्मरण किया करता हूं।

व्यासदेव बोले,—चारुहासिनी देवी महालक्ष्मीने विष्णुकी बातें सुनकर कुछ हँसते हुए प्रेमपूर्वक कहा,—हे शौरे! मैं उस श्लोकार्धका विवरण करती हूं, सुनो। हे चतुर्भुज! मैं तुम्हारी तरह सगुण मूर्तिमयी होकर आयी हूं, इसीसे तुम मुझे जान पाते हो; किन्तु उस अखिल गुणोंकी आधारस्वरूपा

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

सब गुणोंसे अतीत महाशक्तिको जान नहीं पाते। हे महाभाग! उसी सब गुणोंसे अतीत देवी भगवतीने ही सर्वकल्याणप्रद, परमपवित्रताकारक, वेदका सारस्वरूप वह श्लोकार्ध कहा था। हे शत्रुनिषूदन! मेरी समझमें उस परमाशक्तिकी तुमपर बड़ी कृपा है, इसीसे उसने तुम्हारे हितके लिये तुमसे परम गुह्य विषय कहा है। हे सुव्रत! उस महाविद्याका कहा हुआ वचन सब शास्त्रोंका सारभूत समझो और उसको हृदयमें अच्छी तरह जमा लो; उसे कभी भूलना नहीं। त्रिभुवनमें इससे अधिक और कुछ जानने योग्य नहीं रह जाता। तुम उस देवीके बहुत प्यारे हो, इसीसे उसने यह बात बतायी है। भगवान् चतुर्भुज विष्णुने देवी महालक्ष्मीकी बात सुनकर और उक्त श्लोकार्धको अत्युत्तम जप करने योग्य मूलमन्त्र जानकर निरन्तर हृदयमें उसीका जप करना प्रारम्भ किया। थोड़े समयके पश्चात् विष्णुके नाभिकमलसे उत्पन्न हुए ब्रह्मा मधु-कैटभ नामक दैत्योंके भयसे डरकर भगवान् हरिके शरणापन्न हुए और श्रीहरि उन्हें (दोनों दैत्योंको) मारकर बहुत स्पष्टतासे उक्त श्लोकार्धका जप करने लगे। कमलयोनि देव प्रजापति, कमलापति वासुदेवको उस श्लोकार्धका जप करते देखकर परम प्रेमपूर्ण हृदयसे जिज्ञासा करने लगे कि, हे देवेश! आप किसका जप कर रहे हैं? हे पुण्डरीकाक्ष! क्या आपकी अपेक्षा भी कोई अधिक सामर्थ्यशाली है? हे जगदीश्वर! आप किसका स्मरण कर प्रसन्न हो

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

रहे हैं ? ब्रह्माके प्रश्न सुनकर भगवान् हरिने उत्तर दिया कि, हे महाभाग ! तुममें और मुझमें जो कार्यकारणस्वरूपा कल्याणमयी भगवती आद्याशक्ति विराजमान हो रही है, उसके सम्बन्धमें तुम स्वयं एकवार विचार कर देखो; आप ही तुम्हें सब कुछ ज्ञात हो जायगा। अगाध महासागरकी तरह जिस साकार महाशक्तिपर अखिल जगत् स्थित है, वही कूटस्थ ब्रह्मरूपिणी अमेया सनातनी महाशक्ति मेरी उपास्य-देवता है। जो चराचर अखिलविश्वमण्डलको वार-वार सृजन किया करती है, उस वरदायिनी भगवतीके प्रसन्न होने-पर मनुष्य संसारवन्धनसे छूट जाता है और वही मुक्तिकी कारणस्वरूपा सनातनी परमा विद्या मूढ़ जीवोंके लिये संसार-बन्धनका कारण बन जाती है। संसारमें जिसे ईश्वर कहते हैं, उसकी भी वह ईश्वरी है। हे ब्रह्मन्! मैं, तुम और समस्त विश्वका वस्तुमात्र उसीकी चित्शक्तिसे उत्पन्न हुआ है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। उसने जिस श्लोकार्धसे मुझे भागवतबीजका उपदेश दिया है, द्वापरके आरम्भमें वह विस्तारको प्राप्त होगा। भगवान् ब्रह्माने विष्णुके नाभि-कमलमें रहते हुए विष्णुसे यह भागवतबीज प्राप्त किया था। ब्रह्माने यह अमितबुद्धिशाली अपने पुत्र नारदको बताया। मुनिवर नारदसे मैंने पाया और मैंने वारह स्कन्धोंमें विस्तार कर इसे पूरा किया। अतः हे महाभाग! तुम अब इस पाँच लक्षणोंसे युक्त वेदतुल्य भागवतपुराणका अध्ययन करो।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

इसमें देवी भगवतीकी अद्भुत चरित्रकथाएँ, सब वेदोंके निगूढ़ अर्थ और तत्वज्ञानसम्बन्धी सब विषय वर्णित होनेसे यह सब पुराणोंमें उत्कृष्टतम और धर्मशास्त्रके समान पवित्र है। वह ब्रह्मविद्याका आधारस्वरूप होनेसे इसका पाठ करनेसे मनुष्य संसारसागरसे अनायास पार हो जाते हैं। सामान्य पाठकोंके मनोरञ्जनके लिये इसमें वृत्रासुरवध तथा अन्यान्य नाना प्रकारके उपाख्यान निहित हैं। हे महाभाग! तुम इस पवित्रताकारक भागवतपुराणको सुनो और अपने हृदयमें अच्छी तरह जमा लो। हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम बुद्धिमानोंमें अग्र-गण्य होनेसे पुराणपाठके योग्य पात्र हो। इसमें जो अठारह सहस्र श्लोक हैं, उन्हें तुम कण्ठस्थ कर लो; क्योंकि सर्वप्रशंस-नीय, सर्वकल्याणकर, पुत्र-पौत्रविवर्धक, दीर्घायु और सुख-शान्ति देनेवाले इस पुराणके पाठ और श्रवण करनेसे मनु-ष्योंके हृदयाकाशमें ज्ञानसूर्यका उदय होकर समस्त अज्ञाना-न्धकारका नाश हो जाता है। मेरे शिष्य धर्मात्मा लोम-हर्षणका पुत्र यह सूत भी तुम्हारे साथ इस सर्वकल्याणदा-यिनी भागवतपुराणसंहिताका पाठ पढ़ेगा। सूतने कहा,—मेरे गुरुदेव कृष्णद्वैपायनने अपने पुत्र शुकदेवसे इस प्रकार कहकर हम दोनोंको इस पुराणका अध्ययन कराया और यह अतिविस्तृत होनेपर भी मैंने इसे आद्योपान्त कण्ठस्थ कर लिया है।

पुराणोंका अध्ययन कर शुकदेव व्यासदेवके ही आश्रममें

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

रहने लगे; परन्तु ब्रह्माके मानसपुत्र सनत्कुमार आदिकी तरह स्वभावतः संसारसे विरक्त होनेके कारण पुराणोक्त संसारोपयोगी कर्तव्यों ( कर्मकाण्ड सम्बन्धी ) का अनुशीलन करनेमें उन्हें शान्ति नहीं मिलती थी। वे व्याकुल अन्तःकरणसे निर्जन स्थानमें ही रहा करते थे। उनको देखनेसे ही पता लगता था कि, वे शून्यहृदय हो रहे हैं। वे न तो भोजनमें अत्यन्त आसक्त रहते, न उपवास ही करते। एक बार उन्हें ऐसे चिन्ताक्रान्त देखकर व्यासदेवने कहा,—हे पुत्र! तुम निरन्तर किस विषयकी चिन्ता किया करते हो? ऐसे मनमें व्याकुल क्यों हो रहे हो? ऋणग्रस्त दरिद्रोंकी तरह सदा तुम क्यों सोचमें पड़े रहते हो? हे वत्स! मैं तुम्हारा पिता हूं। मेरे रहते तुम्हें किस बातकी चिन्ता है? तुम अपने चित्तसे शोकको दूर कर सुखका उपभोग करो। अन्य सब चिन्ताओंको छोड़कर तुम शास्त्रोक्त ज्ञानसम्बन्धी चिन्ता करो और विज्ञानलाभकी ओर बढ़ो। हे सुव्रत! यदि मेरे उपदेशोंसे तुम्हारे चित्तमें शान्ति नहीं होती, तो हे वत्स! जिसका शासन राजा जनक करता है, उस मिथिला नगरीमें जाओ। हे महाभाग! वह धर्मात्मा, सत्यसागर, विदेह, भूपति जनक तुम्हारे मोहजालको छिन्न कर देगा। हे पुत्र! तुम उस नृपतिके पास जाकर यथार्थरूपसे वर्णाश्रमधर्मके विषयकी जिज्ञासा कर अपने मनका सन्देह मिटा लो। वह पवित्रात्मा, सत्यवादी, अतिशान्त, सदायोगप्रिय, राजर्षि

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

जनक उत्तम योगी, ब्रह्मतत्वको जाननेवाला और जीवन्मुक्त है। अरणीगर्भसम्भूत महातेजस्वी शुकदेवने अमोघतेजस्वी व्यासदेवकी यह बात सुनकर उत्तर दिया कि, हे धर्मात्मन्! आपका वचन कदापि मिथ्या हो नहीं सकता। परन्तु राजा जनक आनन्दपूर्वक राज्यशासन करते हैं और जीवन्मुक्त तथा विदेह भी हैं, यह आपका उँजाले-अंधेरेके समान सर्वथा परस्परविरुद्ध वचन सुनकर मुझे तो यही प्रतीत होता है कि, उनकी ये दोनों उपाधियाँ केवल दम्भ दिखानेके लिये हैं। पिताजी! मेरे मनमें यह विषम सन्देह हो रहा है कि, राजर्षि जनक देहविहीन होते हुए भी राज्यशासन कैसे करते हैं? आपका कहा हुआ राजा जनकका नाम तो मुझे वन्ध्या-पुत्रकी तरह झूठा प्रतीत होता है। हे तात! मैं उस नृपवर विदेह जनकको देखना चाहता हूं। क्योंकि मेरे हृदयमें यह बड़ा सन्देह हो रहा है कि, जलमें रहकर कमल-पत्रके समान संसारमें रहकर वे कैसे निर्लिप्त रहते हैं? हे वाग्मिप्रवर! जनककी जीवन्मुक्ति क्या बौद्धमतावलम्बियोंके अन्तर्गत देहात्मवादी चार्वाककी बतायी हुई जीवन्मुक्तिकी तरह है? हे महामते! राजर्षि जनक संसारी होते हुए इन्द्रियोंके व्यवहारको कैसे छोड़ सकते होंगे? यह बात मेरी समझमें नहीं आती कि, जिस विषयका उन्होंने उपभोग किया हो, अथवा जो कर्म किया हो, वह न कियेके बराबर कैसे हो जायगा?

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

माता, पुत्र, भार्या, भगिनी, कुलटा आदि नाना व्यक्तियोंमें भिन्नता होनेके कारण उनके प्रति वैसी ही बुद्धि हुआ करती है। वह भेदज्ञान कैसे मिट सकता है? और जब भेदज्ञान बना हुआ है, तो जीवन्मुक्ति कैसे सम्भव हो सकती है? यदि उनकी रसनाको कटु, क्षार, तीता, खट्टा, कसैला और मीठा ज्ञात होता हो, तो समझना चाहिये कि, वे अत्युत्तम भोग सुखको भोगते हैं। हे तात! मेरे सन्देहकी अद्भुत बात तो यह है कि, जब उन्हें शीत, उष्ण, सुख-दुःख आदिका ज्ञान है, तो उनके लिये जीवन्मुक्ति कैसे सम्भव है? राज्य-कार्य करते समय अमुक मित्र है, अमुक शत्रु है, अमुक काम प्यारा है, अमुक अप्रिय है, इस भेद-ज्ञानको वे कैसे भूल जायंगे? चोर और तापसी दोनोंको वे समान कैसे समझ लेंगे? जब इन सब बातोंका भेदज्ञान उनमें रहेगा, तो उनकी मुक्ति कैसे होगी? हे तात! अबतक मैंने ऐसा कोई व्यक्ति नहीं देखा है, जो जीवन्मुक्त हो और प्रजापालनमें तत्पर राजा भी हो! इसीसे मुझे बड़ा सन्देह हो रहा है। मैं समझ नहीं सका कि, राजा जनक घरमें रहकर भी कैसे मुक्त हो गये? जो हो, जब आप कहते हैं कि, राजा जनक ऐसे ही जीवन्मुक्त हैं, तब उन्हें देखनेकी मुझे प्रबल इच्छा हो रही है। अतः अपने सन्देहको मिटानेके लिये मैं मिथिला जाना चाहता हूँ।

सूतने कहा,—मिथिलापुरीमें जानेकी इच्छा करनेवाले

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

शुकदेवने पितासे इस प्रकार कहकर उनके चरण पकड़ लिये और फिर उनसे हाथ जोड़कर कहा,—हे महाभाग ! आपका वचन मेरे शिरोधार्य है। आपकी आज्ञाके अनुसार जनक-द्वारा शासित विदेह देशको देखनेके लिये मैं जाना चाहता हूं ; आप मुझे अनुमति दीजिये। हे तात ! मुझे इस बातका बड़ा सन्देह है कि, राजा जनक बिना दण्डविधानके कैसे राज्य करते होंगे ? यदि उनके राज्यमें दण्डविधान न होता हो, तो कोई व्यक्ति धर्मपथमें नहीं होगा। धर्मरक्षाके लिये ही जब मनु आदि मनीषियोंने दण्डविधानकी व्यवस्था की है, तब दण्डके बिना धर्मरक्षा कैसे हो सकेगी ? हे महाभाग ! आपने राजा जनककी जो बात कही है, वह उतनी ही सत्य जान पड़ती है, जितनी कि, कोई यह बात कहे कि, मेरी माता वन्ध्या है। अतः हे तपस्विन् ! आप मुझे अनुमति दें, तो मैं मिथिलाकी यात्रा करूँगा। उस निष्पाप परमज्ञानी पुत्र शुकदेवको मिथिला जानेके लिये उत्सुक देखकर सत्यवतीपुत्र व्यासदेवने उसे दृढ़ आलिङ्गन कर कहा,—हे महामते पुत्र शुक ! तुम्हारा कल्याण हो और तुम दीर्घायु हो। हे वत्स ! तुम मुझसे सत्य कहकर यथेच्छ मिथिला जाओ। हे पुत्र ! मिथिलासे लौटकर तुम फिर इसी आश्रममें चले आना, कदापि अन्यत्र कहीं न जाना। हे पुत्र ! मैं तुम्हारा मुख-कमल देखकर सुखपूर्वक जीवन बिता रहा हूं। तुम्हें न देखनेसे मुझे अतिशय दुःख होगा। अधिक क्या कहूँ ?

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

तुमही मेरे प्राणस्वरूप हो । इसीसे मैं कहता हूं कि, तुम राजा जनकसे मिलकर और अपना सन्देह मिटाकर पुनः यहीं चले आओ और वेदाध्ययन करते हुए कालयापन करो ।

सूतने कहा,—व्यासदेवके इस प्रकार कहनेपर शुकदेवने अपने परम पूजनीय पितृदेवको प्रदक्षिणापूर्वक अभिवादन किया और वे धनुषसे छूटे हुए वाणकी तरह द्रुतगतिसे मिथिलाकी ओर चल पड़े। मार्गमें चलते हुए उन्होंने विविध देश, विविध प्रकारसे धनकमानेवाले लोग, नाना प्रकारके वन, विचित्रवृक्षराजि, शस्यपूर्ण ( हरे भरे ) खेत, कहीं तपमें मगन तापसी, कहीं दीक्षित याज्ञिक, कहीं योगाभ्यासमें निरत योगी, कहीं वानप्रस्थाश्रमी वनवासी महात्मा, कहीं शैव, शाक्त, पाशुपत, सौर, वैष्णव आदि सम्प्रदायोंके उपासक देखे और उन्हें देख देखकर उनके हृदयमें महान् विस्मय हुआ। महामति शुकदेव इस प्रकार चलते चलते दो वर्षोंमें मेरुपर्वत और एक वर्षमें हिमालयको पार कर मिथिला पहुंच गये। धनधान्यादि सब ऐश्वर्योंसे पूर्ण उस अत्युत्तम मिथिलामें जाकर उन्होंने क्या देखा कि, वहांकी सब प्रजा सदाचारसम्पन्न और परमसुखी है। शुकदेव जब राजधानीके द्वारसे घुसने लगे, तब वहांके द्वारपालने उनको रोककर पूछा,—आप कौन हैं और किस लिये यहां आये हुए हैं ? द्वारपालके इस प्रकार पूछनेपर शुकदेव कुछ नहीं बोले और द्वारमें प्रवेश न कर और किसीसे कुछ न



CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कहकर अत्यन्त आश्चर्यचकित हो, मनही मन हँसते हुए वहीं खम्भेकी तरह खड़े हो गये।

प्रतीहारीने उनसे पूछा,—हे ब्रह्मन्! आप ऐसे चुप क्यों हो रहे हैं? आप यहां किस लिये पधारे हैं? मैं जानता हूं कि, कोई किसीके यहां विना प्रयोजनके नहीं जाता; परन्तु राजाकी आज्ञा है कि, जिसका कुल और शील ज्ञात न हो, उसे नगरमें घुसने न दिया जाय। अतः हे द्विजवर! सभी-को राजाकी आज्ञा लेकर नगरमें प्रवेश करना पड़ता है। जान पड़ता है कि, आप परमतेजस्वी और वेदके ज्ञाता हैं। अतः हे मानद! मुझसे अपना उद्देश्य कहकर आप नगरमें जा सकते हैं। द्वारपालकी बातें सुनकर उससे शुकदेवने कहा,—मैं विदेहनगरको देखनेके लिये आया था, किन्तु देखता हूं कि, मेरे जैसे व्यक्तिके लिये नगरमें प्रवेश करना दुर्लभ है। हे द्वारपाल! मैं जिस उद्देश्यसे आया हूँ, वह तो तुम्हारे वचनसे ही सिद्ध हो गया। मैं दुर्बुद्धि हूँ, इसीसे मोहमें पड़ गया था। उसी मोहके कारण राजदर्शनके विचारसे अनेक देशोंको छानता और दो पर्वतोंको लांघता हुआ यहां उप-स्थित हुआ हूं। हे महाभाग! मैं और किसीको क्या दोष दूँ? स्वयं पिताने ही मुझे ठगा है। अथवा मेरे पूर्व-जन्मार्जित कर्मही मुझे भूतलपर भटका रहे हैं। हा! संसारमें एकमात्र धनाशा ही पुरुषके परिभ्रमणका कारण हुआ करती है। किन्तु मुझे वह आशा न होते हुए भी भ्रमवश यहां

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

भटकता हुआ चला आया हूं। मैं समझ गया कि, आशा-शून्य मनुष्य यदि मोहजालमें न फँसे, तभी नित्य सुख प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं। हे महाभाग! मुझे किसी विषयकी आशा न रहते हुए भी मैं मोहसागरमें निमग्न हो रहा हूं। हा! कहां मेरुपर्वत और कहां मिथिला! मैं पैदल ही इतनी दूर यहां आया; परन्तु मेरे परिभ्रमणका क्या यही फल हुआ? मैंने निश्चितरूपसे समझ लिया है कि, विधाताने ही मेरी वञ्चना की है। चाहे शुभ हो या अशुभ, प्रारब्धका भोग अवश्यही करना पड़ता है। जीवोंके सभी उद्यम प्रारब्धके वशीभूत हुआ करते हैं। इच्छा अथवा कारण न रहते हुए भी प्रारब्ध उन्हें नाना प्रकारके कार्योंमें प्रवृत्त कराया करता है।

यहाँ मूर्तिमान वेद अथवा कोई तीर्थ नहीं है, जिसके लिये इतने परिश्रम कर मैं चला आया। यहाँ केवल एक विदेह नामक भूपति है, परन्तु उससे मिलनेकी भी आशा जाती रही; क्योंकि इस नगरमें मैं प्रवेश ही नहीं कर पाया। शुकदेव यह कहकर खिन्न हुए और मौनव्रतावलम्बीकी तरह चुप मारकर खड़े ही रहे। उनको परमज्ञानी ब्राह्मणश्रेष्ठ जानकर द्वारपालने उनसे मीठी भाषामें कहा,—हे द्विजवर! आपका जहां कार्य हो, वहां इच्छाके अनुसार आप गमन कीजिये। हे ब्रह्मन्! मैंने नगरमें जानेसे जो आपको रोक देनेका अपराध किया, इसके लिये आप क्षमा कीजिये। आप जैसे मुक्तपुरुषोंका क्षमा ही परम बल हुआ करता है।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

शुकने कहा,—हे द्वारपाल! तुम्हारा क्या दोष है? तुम तो पराधीन हो। सेवकको सदा यथोचित प्रभु-कार्य करना ही चाहिये। तुमने मुझे नगरमें नहीं घुसने दिया, इसमें राजाका भी कोई दोष देख नहीं पड़ता। क्योंकि अजनबी मनुष्य चोर है या शत्रु, यह जान लेना चतुर मनुष्योंको उचित है। अपरिचित होते हुए मैं यहां सहसा आगया, यह मेरा ही सर्वथा दोष है। सभी जानते हैं कि, दूसरेके घर जाना लघुताका कारण होता है।

प्रतीहारी बोला,—हे द्विजवर! सुख क्या है और दुःख क्या है? अपना कल्याण चाहनेवालेको क्या करना चाहिये? शत्रु कौन है और हितैषी कौन है? इन प्रश्नोंको इस समय मुझे समझा दीजिये।

शुकदेवने कहा,—सर्वत्र मनुष्य दो प्रकारके देख पड़ते हैं;—एक रागी और दूसरे विरागी। दोनों प्रकारके मनुष्योंके चित्त भी द्विविध होते हैं। रागीपुरुष मूर्ख और चतुर इन दो श्रेणियों और विरागी पुरुष ज्ञात, अज्ञात तथा मध्यम इन तीन श्रेणियोंमें विभक्त हैं। चतुर रागीपुरुषका चातुर्य शास्त्रज और बुद्धिज दो प्रकारका होता है। बुद्धिके भी युक्त और अयुक्त रूपसे दो भेद होते हैं। शुकदेवके वचन सुनकर प्रतीहारीने कहा,—हे विद्वन्! आपने जो कुछ कहा, उसका अर्थ मेरी समझमें नहीं आया। हे द्विजसत्तम! आप विस्तृतरूपसे इन बातोंको समझाइये। शुकदेवने कहा,—

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

जिसका संसारमें अनुराग होता है, पण्डितगण उसे रागी कहते हैं। रागीपुरुषको वारवार नाना प्रकारके सुखों और दुःखोंका अनुभव करना पड़ता है। स्त्री, पुत्र, धन, मान, अभ्युदय आदि पानेसे रागीपुरुषको सुख और इनके अभावसे हर घड़ी दुःख भोगना पड़ता है। जिस उपायसे ऐहिक सुख होता है, सुखसाधनके उस उपायको रागीपुरुष अपना कर्तव्य समझता है। इसीसे उसके सुखलाभमें जो विघ्न करे, उसे वह शत्रु और जो सुखलाभमें सहायता करे, उसे मित्र मानता है। चतुर रागीपुरुष किसीपर मुग्ध नहीं होता और मूढ़ रागी चाहे जिसकिसीपर मुग्ध हो जाता है। आत्मतत्वमें जो अनुरक्त और संसार-विरागी हैं, उनको निर्जन स्थानमें रहने, आत्मतत्वकी चिन्ता करने और वेदान्त-शास्त्रका अनुशीलन करनेमें सुख और सांसारिक वातोंमें दुःख होता है। जो अपना कल्याण चाहते हैं, उन विज्ञ संसार-विरागी पुरुषोंके काम, क्रोध, प्रमाद आदि अनेक शत्रु और एकमात्र सन्तोष उनका मित्र होता है। सन्तोषके अतिरिक्त संसारमें उनका कोई मित्र नहीं होता।

द्वारपालने शुकदेवकी बातें सुनकर और उन्हें परमज्ञानी जानकर तुरन्त नगरके एक मनोहर भागमें पहुंचा दिया। वहां पहुंचकर शुकदेव क्या देखते हैं कि, नगर उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकारके लोगोंसे भरा हुआ है। सब बाज़ार नाना प्रकारके क्रय-विक्रयके पदार्थोंसे भरा हुआ है और वहां विपुल

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थोंका अखण्ड क्रयविक्रय हो रहा है। धन-जन-पूर्ण महासमृद्धिशाली उस नगरके प्रायः सभी स्थानोंमें राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदिका बोलबाला है और जहां तहां दुःशील लोग परस्पर लड़ झगड़ रहे हैं। सूर्यके समान महातेजस्वी शुकदेव त्रिविध लोकसमूहको देखते हुए जब राजभवनके पास पहुंचे, तब उन्हें वहांके भी द्वारपालने रोक दिया। तब वे द्वारमें ही काठकी तरह खड़े होकर मोक्ष-सम्बन्धी विचार करने लगे।

छाया और धूपको समान समझनेवाले महातपस्वी शुकदेव ध्यानस्थ होकर एक ओर खम्भेकी तरह खड़े थे, इतनेमें वहाँ राजाका एक अमात्य आया और उन्हें प्रणाम कर राजभवनके दूसरे एक भागमें ले गया। फिर फूले-फले दिव्य वृक्षोंकी पंक्तियोंसे सुशोभित सुरम्य स्वर्गीय उपवनको दिखाता और यथाविधि आतिथ्य करता हुआ वह उन्हें एक रमणीय महलमें ले गया। मन्त्रिवर ऐसी वाराङ्गनाओंको, जो राजसेवामें परायण, नाच-गाने-बजानेमें कुशल और कामशास्त्रमें विशारद थीं, शुकदेवकी सेवा करनेकी आज्ञा देकर वहाँसे चला गया। परन्तु व्यासनन्दन शुकदेव जैसे आये थे, वैसे ही खड़े रह गये। उन सब वारवनिताओंने देशकालके उपयोगी विविध खाद्य वस्तुओंके द्वारा शुकदेवको सन्तुष्ट करते हुए परम भक्तिभावसे यथाविधि उनकी पूजा की। अन्तःपुरकी स्त्रियोंने जब शुकदेवकी सुन्दरता देखी, तब

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कामवश होकर उनपर रीझ गयीं और उन्हें अन्तःपुरमें ले जाकर वहाँके सुरम्य उद्यानोंकी शोभा दिखाने लगीं। एक तो शुकदेव युवा और रूपवान् थे, दूसरे, उनकी कान्ति बड़ी ही कमनीय थी, तीसरे, मनोहरमूर्ति होनेपर भी असाधारण मधुरभाषी थे, इस कारण उन्हें दूसरे कामदेव ही जानकर सभी स्त्रियां कामबाणसे वेधी जाकर अपनी सुधबुध भुला बैठीं। सबने थोड़े ही समयमें जान लिया कि, मुनिवर शुकदेव परमजितेन्द्रिय हैं; तब वे उनकी परिचर्या करने लगीं। अरणिसे उत्पन्न हुए विशुद्धात्मा शुकदेव भी उनको माताओंकी दृष्टिसे देखने लगे। आत्माराम, जितक्रोध, शुकदेव किसी उपायसे प्रसन्न अथवा परितृप्त होनेवाले नहीं थे; इसीसे उन कामिनियोंके कामविकारोंको देखकर भी स्वस्थचित्तसे ज्योंके त्यों बैठे रहे। अनन्तर वाराङ्गनाओंने शुकदेवके विश्रामके लिये अत्युत्तम स्वच्छ चादर बिछी हुई और नानाप्रकारके सुखकर उपाधानोंसे सजी हुई अतिपरिष्कृत और रमणीय शय्या प्रस्तुत कर दी। शुकदेवने निरलस होकर हाथ-पैर धोये, अंगुलियोंमें कुशके पवित्रक धारण किये और सायंसन्ध्या समाप्त कर ध्यान लगा लिया। एक प्रहरतक शुकदेवने ब्रह्मध्यान किया और फिर दो प्रहरतक सोकर तथा रात्रिके चौथे प्रहरमें जागकर पुनः चित्तको ब्रह्मध्यानमें जमा दिया। अनन्तर ब्राह्ममुहूर्त्तमें स्नान और प्रातःकृत्य समाप्त कर उन्होंने समाधि लगा ली।

सूतने कहा,—हे महर्षियो ! राजा जनकने जब सुना कि,

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

गुरुपुत्र शुकदेवजी पधारे हैं, तब वे पुरोहित और मन्त्रियोंको साथ लेकर पवित्रभावसे उनके निकट उपस्थित हुए। फिर राजाने पाद्य, अर्घ्य आदिसे शुकदेवकी उत्तम प्रकारसे पूजा कर उन्हें उत्तम आसनपर बैठाया और उत्तम दुधार गाय देकर उनसे कुशलप्रश्न पूछा। शुकदेवने राजाकी यथाविधि की हुई पूजाको स्वीकार कर और अपना कुशल कहकर राजाका सब प्रकारका कुशल पूछा। जब दोनों अपने अपने आसनोंपर विराजमान हो गये, तब नृपति जनकने प्रशान्तचेता व्यासनन्दन शुकदेवसे जिज्ञासा की कि, हे महाभाग मुनिश्रेष्ठ! आप सब विषयोंमें निःस्पृह होते हुए मेरे यहां कैसे चले आये? शुकदेवने उत्तर दिया,—हे महाराज! मेरे पिता व्यासदेवने कहा है,—वत्स! दारपरिग्रह करो; क्योंकि सब आश्रमोंमें गृहस्थाश्रम उत्तम है। परन्तु मैं उसे संसारबन्धनका कारण समझता हूं; अतः वे मेरे परमगुरु होनेपर भी उनकी बात मुझे नहीं जँची। उन्होंने मुझसे फिर कहा,—गृहस्थी करनेसे किसीको बन्धन नहीं होता। परन्तु वह बात भी मैंने नहीं मानी। अनन्तर मुनिवरने इस विषयमें मुझे सन्दिग्धचित्त जानकर परमहितकर वचन कहा कि, हे पुत्र! शोक न करो और अपना सन्देह मिटानेके लिये मिथिला चले जाओ। वहां मेरा शिष्य राजा जनक निष्कण्टक राज्य कर रहा है। वह जीवन्मुक्त और देहोपाधिसे शून्य कहकर प्रसिद्ध है। वह राजर्षि जब राज्यशासन करते हुए भी मायापाशमें नहीं

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

फँसता, तब हे पुत्र! तुम वन्यवृत्तिका अवलम्बन करके भी संसारबन्धनसे क्यों डर रहे हो? हे महाभाग! मेरे वचनपर विश्वास करके तुम विवाह करलो और यदि तुम्हारा सन्देह किसी प्रकार न मिटे, तो उक्त नृपवरसे मिलो और इस विषयकी उससे जिज्ञासा कर अपने मनकी भ्रान्ति दूर करलो। वह बता देगा कि, तुम्हें यह संदेह क्यों हो रहा है? किन्तु हे पुत्र! उसका उपदेश सुनकर तुम शीघ्रतासे इसी आश्रममें लौट आओ। महाराज! उनके इस प्रकार कहनेसे ही उनसे आज्ञा लेकर मैं इस राजधानीमें चला आया हूं। हे राजेन्द्र! मोक्षके अतिरिक्त मैं और कुछ नहीं चाहता। हे अनघ! कहिये, मोक्षप्राप्तिके लिये मुझे क्या करना चाहिये? हे नृपवर! तपोनुष्ठान, तीर्थसेवन, व्रतावलम्बन, यज्ञ-याग, वेदाध्ययन अथवा ज्ञानार्जन, जो कुछ मोक्षप्राप्तिका कारण हो, उसीका उपदेश मुझे कीजिये।

जनकने कहा.—हे गुरुपुत्र! मोक्षमार्गानुसारी ब्राह्मणोंका क्या कर्त्तव्य है, वह मैं कहता हूं, सुनो। ब्राह्मणकुमारका उपनयन हो जानेपर वेदाभ्यासके लिये उसे गुरुगृहमें निवास करना चाहिये। फिर वेद और वेदान्तादि शास्त्रोंका अध्ययन कर यथाविधि गुरुको दक्षिणा देकर समावर्तन हो जानेपर पत्नीसहित गार्हस्थ्यधर्ममें प्रवेश करना चाहिये। अनन्तर निरन्तर सन्तुष्टचित्त, निःस्पृह, निष्पाप और सत्यवादी होकर पवित्र हृदयसे न्यायानुसार जीविकानिर्वाह करते हुए अग्नि-

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

होत्रादि कार्योंका अनुष्ठान कर पुत्र-पौत्र हो जानेपर पुत्रके पास पत्नीको रखकर वानप्रस्थाश्रमका अवलम्बन करना चाहिये। अन्तमें वह धर्मवेत्ता ब्राह्मण तपश्चर्याके द्वारा छहों रिपुओंको जीतकर शान्तिबोध और निर्मल वैराग्यका उदय हो जानेपर सब प्रकारसे अग्निको आत्मामें आरोपित कर चतुर्थाश्रममें प्रवेश करे। प्रथम गृहस्थी कर उससे जिसे वैराग्य हो गया हो, वही संन्यासाश्रमका अधिकारी होता है। इससे अन्यथा होनेपर कोई कभी संन्यासाश्रमका अधिकारी हो नहीं सकता। वेदका यह परमहितकर वचन कदापि मिथ्या हो नहीं सकता; यह मेरा पूर्ण विश्वास है। हे शुक! वेदोंमें अड़तालीस प्रकारके संस्कार कहे गये हैं। उनमें विद्वानोंने गृहस्थोंके लिये चालीस और मोक्षाभिलाषी पुरुषोंके लिये शम, दम आदि आठ प्रकारके संस्कार निर्णीत किये हैं। चिरकालसे शिष्टपुरुषोंका यही अनुशासन सुना जाता है कि, ब्राह्मणको पूर्व-पूर्वके आश्रमोंके लिये कहे हुए कर्तव्योंको करके फिर उत्तर आश्रमोंमें प्रवेश करना चाहिये।

शुकदेव बोले,—अन्तःकरणमें ज्ञान-विज्ञानसे उत्पन्न होनेवाले निर्मल वैराग्यका उदय हो जानेपर भी क्या गृहस्थ आदि आश्रमोंमें ही बने रहना चाहिये, या सब कुछ छोड़कर अरण्यमें चले जाना चाहिये? जनकने कहा,—हे गुरुजनका सम्मानकरनेवाले शुकदेवजी! योगकी अपरिपक्व अवस्थामें बलवान् इन्द्रियसमूह अपने वशमें हो गये हैं, ऐसा प्रतीत

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

होनेपर भी उनपर विश्वास कर लेना उचित नहीं है । क्योंकि प्रायः देखा जाता है कि, अनेक अपक्वयोगियोंके इन्द्रिय-समूह किसी न किसी कारणसे विकारको उत्पन्न कर देते हैं । सोचिये तो सही कि, जिसने संन्यासाश्रम ग्रहण कर लिया है, वह यति होकर अपने मनोविकारोंको कैसे दबा सकता है ? वासनाओंमें जब तक, पातित्य है; तब उसे भोजनकी, विछौनेपर सोनेकी, पुत्रको देखनेकी या इसी तरहके अन्य सुखोपभोगकी इच्छा करनेका अधिकार ही कहाँ रह जाता है ? परन्तु इन्द्रियोंके वेगके कारण जब वह इच्छाओंके फेरमें आजाता है, तब बड़ा ही संकटग्रस्त हो जाता है । मानवोंका वासनाजाल सहजमें तोड़ा नहीं जा सकता । किसी उपायसे वासनायें नहीं मिटतीं । अतः उस वासनाजालको छिन्न करनेके लिये क्रमशः एक एक वासनाका त्याग करना ही उचित है ।

जो व्यक्ति ऊँचा चढ़ेगा, वही गिरेगा । जो नीचे रहेगा, उसके गिरनेकी कोई आशङ्का नहीं रहती । इसी तरह एकवार उच्चतम संन्यासधर्मका आश्रय करलेनेपर उससे यदि कोई भ्रष्ट हो जाय, तो वह सम्हल नहीं सकता । चिउँटी पेड़की जड़से चढ़ना आरम्भ कर धीरे धीरे शाखाओंपर चढ़कर इच्छित फलको पा जाती है । इसी तरह मनुष्य यदि क्रमशः उच्च-उच्चतर आश्रमोंका आश्रय करे, तो वह अनायास अभीष्टको पानेमें समर्थ हो सकता है । पक्षी विघ्नकी

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

आशङ्का न कर शीघ्रतासे ऊँचे उड़ते हैं, इसीसे थोड़े ही समयमें थककर इच्छित स्थानमें पहुंच नहीं पाते। परन्तु चिउँटी धीरे धीरे विश्राम करती हुई सुखसे इच्छित स्थानमें पहुँच जाती है। मन बड़ा ही दुर्दान्त होता है। अपक्व-बुद्धिवाले मनुष्य उसे सहसा जीत नहीं सकते। यथाक्रम आश्रमधर्मका प्रतिपालन करनेसे वह वशमें किया जा सकता है। कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो गृहस्थाश्रममें रहकर भी शान्तप्रकृति और समबुद्धि होते हैं, लाभ-अलाभको समान समझते हैं, आनन्दके समयमें उद्विग्न नहीं होते और चिन्ताजनक विषयोंको छोड़कर विहित कार्योंको करते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियोंको आत्मसाक्षात्कार हो जाता है और उसीसे निर्मल सन्तोष होकर मोक्षपदकी भी प्राप्ति होती है। इसमें सन्देह करनेका अणुमात्र कारण नहीं है। हे अनघ! देखिये, मैं राज्यशासन करता हुआ भी जीवन्मुक्त हूं। किसी प्रकारका सुख या दुःख उपस्थित होनेपर न मुझे सुखका अनुभव होता है, न दुःखका ही। मैं निरन्तर स्वाधीनभावसे यथेच्छ विचरण करता हूं, विविध भोग्य वस्तुओंका उपभोग करता हूं और अपनी इच्छाके अनुसार नाना प्रकारके कार्योंका अनुष्ठान करता हूँ। परन्तु परिणाममें मुझे विदेह-मुक्ति प्राप्त होगी। इसी तरह आप भी अपने कर्तव्य-कर्मोंका आचरण कर मुक्त हो जाइये। हे गुरुपुत्र! वेदान्तादि शास्त्रोंने भ्रांतिमूलक दृश्यजगत्को जब जड़ कहा है, तब

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

जड़मय दृश्य पदार्थके द्वारा अदृश्य चिन्मय आत्मा कैसे बद्ध हो सकता है? हे ब्रह्मन्! पृथ्वी आदि पञ्चमहाभूत दृश्य होनेपर भी उनके गुण आदि अनुमानसे ही जाने जाते हैं। आत्मा भी अनुमानसे ही सिद्ध है, कदापि प्रत्यक्ष नहीं है। फिर अनुमानसिद्ध, अप्रत्यक्ष, निर्विकार, निरञ्जन आत्मा प्रत्यक्ष, सविकार, दृश्य वस्तुके द्वारा बन्धनको कैसे प्राप्त होगा? हे द्विज! मलिनचित्त ही सब सुख-दुःखोंका कारण है। चित्त निर्मल हो जानेसे ही सब वस्तुएं निर्मल ब्रह्ममय हो जाती हैं। बार बार अनेक तीर्थोंमें भटकने और स्नान करनेपर भी यदि चित्त निर्मल नहीं हुआ, तो सब कुछ किया हुआ निरर्थक है। हे परन्तप! मनुष्योंके लिये मनके सिवा देह, जीवात्मा या इन्द्रियसमूह कुछ भी बन्धन या मुक्तिका कारण नहीं है। आत्मा तो निरन्तर शुद्ध, चैतन्यमय और मुक्त है। वह कभी बद्ध हो ही नहीं सकता। बद्धता या मुक्तता यह तो मनमें ही भरी रहती है। मन शान्त हो जानेसे संसारबन्धन भी टूट जाता है। यह शत्रु है, यह मित्र है, यह उदासीन है, इस प्रकारकी भेदबुद्धि द्वैतज्ञानके कारण मनमें ही होती है। समस्त जगत् एक आत्ममय है, ऐसा जानलेनेपर क्या भेदबुद्धि कहीं रह सकती है?

द्वैतबोध अर्थात् एकात्मज्ञानके अभावसे ही संसारमें जीव और ब्रह्ममें भेदबुद्धि हो जाती है। नहीं तो जो मैं हूं

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

वही ब्रह्म है, जीव और ब्रह्म एकही वस्तु है, ऐसी बुद्धि हो जानेपर विचारकी कोई बात ही नहीं रह जाती। हे महाभाग ! उक्त प्रकारका भेदज्ञान ही अविद्या और जिससे उसका विनाश हो जाता है, वह ज्ञान ही विद्या नामसे अभिहित होता है। विचक्षण व्यक्तियोंको सदा विद्या और अविद्याका यह विषय मनमें जमा रखना चाहिये। कड़ी धूपका क्लेश सहन किये विना जिस प्रकार छायाके सुखका अनुभव नहीं होता, उसी प्रकार अविद्याका बोध हुए विना विद्याका स्वरूपज्ञान होना सम्भव नहीं है। गुणोंके समष्टि-स्वरूप द्रव्योंमें सत्व आदि गुण और भौतिक पदार्थोंमें आकाशादि भूत जैसे आप ही आप सन्निविष्ट रहते हैं, वैसे ही इन्द्रियसमूह यदि रूप आदि अपने अपने विषयोंमें स्वभावतः सन्निविष्ट रहें, तो निर्लिप्त आत्माका इसमें क्या दोष है ? तथापि लोकशिक्षाके लिये महात्मालोग हर प्रयत्नसे वैदिक मर्यादाकी रक्षा किया करते हैं। यदि वे ऐसा न करें, तो स्वेच्छाचारी चार्वाकादिकी तरह अज्ञानी सर्वसाधारण भी यथेच्छाचार करने लगेंगे ; जिससे धर्मका लोप होगा और धर्मके लोपसे चिरकालसे प्रचलित वर्णाचार भी क्रमशः नष्ट हो जायगा। यही कारण है कि, वेदानुमोदित मार्गका जो अनुसरण करते हैं, उनका सदा मङ्गल ही हुआ करता है।

राजा जनककी ये बातें सुनकर शुकदेवने कहा,—हे राजन् ! आपने जो सब बातें कहीं, उनको मैंने श्रवण किया है।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

किन्तु हे नराधिप! मेरे मनमें अबतक सन्देह बना हुआ है, वह किसी प्रकार दूर नहीं होता। हे भूपते! वेदोक्त धर्ममें हिंसा है और सुना गया है कि, हिंसासे बढ़कर कोई अधर्म ही नहीं है। फिर वेदोक्त धर्मके पालनसे मुक्ति कैसे हो सकती है? जो हो, ऐसे हिंसापूर्ण वेदोक्त धर्मका अनुष्ठान करनेमें मेरी बुद्धि प्रवृत्त नहीं होती। एक बात और है। जो मनुष्य स्त्रीसहवास आदि विषयोंके उपभोगमें सुख अनुभव करता और उनके अभावसे अत्यन्त क्लेश पाता है, वह जीवन्मुक्त कैसे हो सकता है?

शुकदेवकी ये भ्रान्तियुक्त बातें सुनकर जनकने कहा,—देखिये, यज्ञमें जो हिंसा देखी जाती है, वास्तवमें वह अहिंसा है। क्योंकि इस हिंसामें कोई आसक्ति (अनुराग) नहीं है। यज्ञके अतिरिक्त रागादिजन्य जो हिंसा की जाय, वही वास्तविक हिंसा है; इसमें किसीका मतभेद नहीं है। काठके संयोगसे ही अग्निसे धुआँ निकलता है, काठके न होनेसे नहीं निकलता। इसी तरह हे मुनिसत्तम! आसक्तिके साथ यदि वेदोक्त हिंसा की जाय, तो वह सदोष होती है; आसक्तिरहित वेदोक्त हिंसा नितान्त निर्दोष है। विषयानुरागी मनुष्य यदि हिंसा करें, तो दोषयुक्त होनेसे वह वास्तविक हिंसा कहावेगी; निःस्पृह मनुष्योंकी की हुई वेदोक्त हिंसा हिंसा नहीं कही जा सकती। इसीसे विरागी पुरुष अहङ्कारशून्यहृदयसे जो कुछ करते हैं, वेदज्ञ मनीषीगण उसे

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

न कियेके बराबर ही समझते हैं। हे द्विजसत्तम! वास्तवमें विषयासक्त गृहस्थ रागादिके फेरमें आकर यज्ञादिमें जो पशुहत्या करते हैं, वह हिंसामें गिनी जा सकती है; किन्तु हे महाभाग! जिनका चित्त किसीमें आसक्त नहीं रहता, उन जितात्मा मुमुक्षु व्यक्तियोंके द्वारा अहङ्कारशून्यहृदय और निष्कामभावसे, केवल कर्तव्य समझकर, की हुई हिंसा किसी प्रकार हिंसामें परिगणित हो नहीं सकती।

शुकदेवने कहा,—हे महाराज! मेरे मनमें एक बड़ा ही सन्देह हो रहा है कि, इस मायामय संसारमें रहकर भी मनुष्य किस प्रकार इच्छाओंसे रहित हो सकता है? जब कि, शास्त्रका ज्ञान प्राप्त कर और नित्यानित्यवस्तुका विचार करनेमें समर्थ होकर भी मनुष्य योगादिके अभ्यासके विना मनका मोह नहीं मिटा सकता, तब उसे संसारमें रहकर निस्पृहता कैसे आ जायगी और वह मुक्त ही कैसे हो सकेगा? जिस प्रकार दीपकाका नाम लेनेसे ही घरका अँधियारा नहीं मिट जाता, उसी प्रकार शास्त्राभ्याससे प्राप्त हुआ ज्ञान अन्तः-करणके मोहान्धकारको दूर करनेमें समर्थ नहीं हो सकता। हे नरेन्द्रकेसरी! मोक्षकी अभिलाषा होनेपर सर्वभूतोंकी प्रति-हिंसा न करना ही ज्ञानियोंका कर्तव्य होना चाहिये। किन्तु गृहस्थ ऐसा कर नहीं सकता। अबतक आपका धना-भिलाष, राजसुखभोगका अभिलाष और संग्राममें विजया-भिलाष नहीं छूटा है। तब आप जीवन्मुक्त कैसे हो सकते

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

हैं? हे नृप! आपमें चोरको चोर और साधुको साधु जानने-का ज्ञान तो अबतक बना हुआ है। इसी तरह अपने-पराये का ज्ञान भी आपमें है। फिर आप विदेह नामसे कैसे प्रसिद्ध हो रहे हैं? हे राजन्! आप कड़ुवे, तीते, कसैले, खट्टे आदि अच्छे-बुरे रसोंका अलग-अलग अनुभव करते हैं। अच्छा होनेपर आपको सन्तोष और बुरा होनेपर दुःख होता है और साधारण लोगोंकी तरह आपको भी जागृत्, स्वप्न तथा सुषुप्ति ये तीनों अवस्थाएँ प्राप्त होती हैं; तब आप तुरीया अवस्थाको कैसे पा सकते हैं? मैं जानना चाहता हूं कि, इन सिपाहियों, घोड़ों, हाथियों और सुखकी सामग्रियोंको आप अपनी समझते हैं, उन सबके आप अपनेको अधीश्वर मानते हैं, इस बातको नटते नहीं। हे राजन्! आप सुस्वादु पदार्थोंका भोजन करते हैं और विशेष अवसरपर आनन्दित या दुःखित भी होते हैं। तब हे नृपवर! आप पुष्पमाला और सर्पके प्रति समदर्शी कैसे हो सकते हैं? हे राजन्! जो मुक्त पुरुष हैं, वे लोहे, लोढ़े और सोनेको एक सा ही समझते हैं, समस्त वस्तुओंको एकमात्र आत्माके रूपमें देखते हैं और सभी प्राणियोंके हितकारी हुआ करते हैं। जो हो, मुझे तो इस समय घर, स्त्री आदि किसी वस्तुसे आत्मसन्तोष होगा, ऐसा प्रतीत नहीं होता। मेरी तो यही इच्छा है कि, मैं निःस्पृह होकर निरन्तर अकेला ही विचरण करता रहूं। मैं सर्वसङ्गरहित, ममताशून्य और शान्तचित्त होकर, किसीसे



CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

कोई याचना न कर, शीत-उष्ण, सुख-दुःख आदिका त्याग कर, अनायास प्राप्त हुए फल, मूल, पत्तोंको खाकर जीवन धारण करता हुआ मृगोंकी तरह स्वेच्छासे सञ्चार करता रहूं, यही मेरी इच्छा है। जब कि, संसार ( गृहस्थी ) में मेरा अणुमात्र अनुराग नहीं है और मैं गुणातीत हूं, तब घर, धन या अनुरूप भार्यासे मुझे प्रयोजन ही क्या है? आप बड़े चावसे नानाप्रकारके विषयोंकी चिन्ता करते हुए भी अपनेको मुक्त समझते हैं, यह आपका कोरा दम्भ जान पड़ता है। हे नृप! आपको कभी शत्रुके सम्बन्धमें, कभी धनके सम्बन्धमें और कभी सेनाके सम्बन्धमें चिन्ता रहा करती है; फिर आप निश्चिन्त कैसे हो सकते हैं? जो मुनिगण मिताहारी और जितेन्द्रिय होकर वैखानसव्रतका अवलम्बन किये हुए हैं, संसारकी असत्यता जानते हुए भी जब कि, वे संसारमायामें मुग्ध हो जाते हैं, तब आपकी तो बात ही क्या है? हे भूपते! आपके पूर्वज राजाओंका जो विदेह नाम पड़ गया है, वह केवल कुटिलतासूचक है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। कोई महामूर्ख विद्याधरके नामसे, जन्मका अन्धा दिवाकरके नामसे और अति दरिद्र लक्ष्मीधरके नामसे पुकारा जाय, तो उसका वह नाम जैसा निरर्थक है, आपका विदेह नाम भी वैसा ही प्रतीत होता है। मैंने सुना है कि, आपके जो पूर्वज राजा हुए, वे केवल नामसे ही विदेह प्रसिद्ध थे, कार्यसे ( यथार्थतः ) नहीं। हे नृप! आपके कुलमें पहिले निमि नामक एक राजा

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

हुआ था। उस राजर्षिने यज्ञ करनेके लिये एकवार अपने गुरु वशिष्ठको निमन्त्रित किया। वशिष्ठने कहलाया कि, मैं यज्ञके लिये पहिले देवराज इन्द्रके यहाँ निमन्त्रित हो चुका हूं; अतः हे राजेन्द्र! पहिले उनके यहाँका यज्ञ समाप्त कर फिर आपके यहाँ यज्ञ कराने आऊँगा। जबतक इन्द्रके यहाँका यज्ञ समाप्त होता है, तबतक आप अपने यहाँके यज्ञकी सामग्री धीरे-धीरे जुटा रखिये। इधर मुनिवर वशिष्ठ यह कहलाकर देवराज इन्द्रके यहाँ उनका यज्ञ करानेके लिये चले गये और उधर राजर्षि निमिने किसी अन्यको गुरु बनाकर यज्ञ आरम्भ कर दिया। जब महर्षि वशिष्ठने यह वृत्तान्त सुना, तब कुपित होकर नृपति निमिको शाप दिया कि, अरे गुरुत्यागी! गुरुत्यागके पापसे इसी समय तेरा देह पतित हो जाय। सुना है कि, गुरु वशिष्ठका यह शाप सुनकर राजर्षि निमिने भी उन्हें शाप दिया कि, आपका भी देह पतित हो जाय। यों परस्परके शापोंसे दोनोंके देह गिर गये, अर्थात् चेतनाशून्य हो गये। अब हे राजेन्द्र! मेरे मनमें यह कौतुक हो रहा है कि, वशिष्ठके शापसे जब राजर्षि निमि देहशून्य हो गया था, तब उसने अपने गुरुको कैसे शाप दिया?

जनकने कहा,—हे विप्रेन्द्र! आपने जो कुछ कहा, मेरी समझमें वह सब सत्य है, इसमें मिथ्या कुछ भी नहीं है। तथापि मेरे परम पूजनीय गुरुदेव व्यासने जो कुछ कहा है, वह भी प्रकृत अवस्थामें नितान्त सत्य है। आप पिताका

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

साथ छोड़कर वनमें जानेकी इच्छा कर रहे हैं, यह सब ठीक है; परन्तु वनमें भी आपका मृगोंसे संसर्ग हो ही जायगा। जब कि, सर्वत्र ही पृथ्वी आदि पञ्चमहाभूत विद्यमान हैं, तब आप निःसङ्ग कैसे हो जायँगे? हे मुने! सदा ही जब आपको आहार आदिकी चिन्ता बनी रहेगी, तब आप निश्चिन्त कैसे हो सकेंगे? आपको वनमें जाकर दण्ड, अजिन आदिकी चिन्ता करनी होगी। मैं चाहे ऐसी चिन्ता करता होऊँ या न होऊँ; राज्यचिन्ताको भी आप इसी दृष्टिसे क्यों नहीं देखते? आपका हृदय विकल्पज्ञानसे दूषित हो जानेसे ही आप इतने दूर देशमें चले आये हैं। किन्तु मेरे हृदयमें किसी विषयका विकल्पजनित सन्देह न होनेसे मैं सदा असन्दिग्धचित्तसे यहीं रहा करता हूं। हे विप्रवर! मुझे किसी बातका सन्देह न होनेसे मैं सुखसे सोता हूं और सुखसे भोजन करता हूं। 'मैं बद्ध नहीं हूं,' ऐसी मेरी बुद्धि बन गयी है; इस कारण हे मुने! मैं सदा सुखी रहता हूं। आपको सन्देह हो गया है कि, आप बद्ध हैं; इसीसे निरन्तर दुःख भोग करते हैं। अतः आप बन्धनकी शङ्काको त्यागकर सुखी हो जाइये। 'यह मेरा है' यही बन्धन है और 'यह मेरा नहीं है' यही मुक्ति है। इस ममत्वकी भावनाको छोड़कर इस बातको निश्चयसे समझ लें कि, यह धन, राज्य, घर, देह आदि कुछ भी मेरा नहीं है।

सूतने कहा,—हे मुनिगण! राजा जनककी ये बातें सुनकर शुकदेव अन्तःकरणमें बड़े प्रसन्न हुए और राजासे विदा

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

मांगकर व्यासदेवके उत्तम आश्रममें चले आये। पुत्रको आया हुआ देखकर व्यासदेवको भी बड़ा सुख हुआ। उन्होंने शुकदेवको छातीसे लगा लिया और फिर उनके सिरको सूंघ कर उनसे कुशल पूछा।

अनन्तर सब शास्त्रोंके जाननेवाले और वेदाध्ययनमें निरत शुकदेव सावधान होकर पिताके निकट बैठ गये और राजकाज करनेवाले महात्मा जनककी अवस्थाको सोचकर परमशान्ति-सुखका अनुभव करते हुए पिताके उसी रमणीय आश्रममें रहने लगे। शुकदेव योगमार्गका अवलम्बन किये हुए थे सही; परन्तु उन्होंने पितृकुलका गौरव बढ़ानेवाली, सौभाग्य-वती और अत्यन्त सुन्दरी पीवरी नामक एक मुनिकन्याका पाणिग्रहण कर लिया। उसी पीवरीसे शुकदेवको कृष्ण, गौर-प्रभ, भूरि और देवश्रुत नामक चार पुत्र और कीर्ति नामक एक कन्या हुई।

श्रीदेवीभागवतके प्रवृत्तिपथके पथिक महात्मा शुक गृहस्थाश्रमी महज्जनोंके निकट अपनी अनुपम जीवनी द्वारा आदर्श स्थापन करते हुए अन्तमें गृहस्थाश्रमका त्याग करके परमहंसवृत्तिको धारणकर उत्तराखण्डकी ओर गये और वहां समाधि द्वारा यथासमय शरीर-त्याग करके ब्रह्मीभूत हो गये।

ॐशान्तिः शान्तिः शान्तिः।

———

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

# परिशिष्ट ।

—:*:—

श्रीमद्देवीभागवतका यह श्रीव्यासशुकसंबाद अतिमधुर-चरितावलीसे पूर्ण और गंभीर दार्शनिक तत्वोंसे गुम्फित है। साथही साथ कथाकी विचित्रताके कारण नाना शङ्काओंका भी इसमें अवसर है। इस कारण इस गाथाके सम्बन्धमें "पुराणरहस्य" नामक पुराणसम्बन्धी टीकाग्रन्थमें जो नाना शङ्काओंका समाधान बहुत विषद रूपसे किया गया है और जिससे पाठकगण बहुत लाभ उठा सकते हैं, वह यथा-क्रम नीचे प्रकाशित किया जाता है।

वेदके तीन काण्ड हैं। यथाः—कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड। उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्डके विषयमें अधिकारभेद तो अवश्य है, परन्तु सिद्धान्तमें कोई मतभेद नहीं है। इसी कारण उन दोनों काण्डोंमें लोगोंको शङ्काका अवसर नहीं है। वेदके कर्मकाण्डमें सकामकर्मका बाहुल्य है। उसके निष्कामकर्मयोगके विषयमें तो शङ्का होती ही नहीं। जितनी शंकाएं होती हैं, सकाम यागयज्ञादिके विषयमें हुआ करती हैं। इस कारण उन कई श्रेणीकी शङ्काओंका समाधान होना आवश्यक है। कर्ममीमांसा और उपासना-मीमांसाके दर्शनशास्त्रोंका सिद्धान्त यह है कि, सकामकर्मके

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

द्वारा भी अभ्युदय और निःश्रेयसका मार्ग पूर्णरीत्या खुला रहता है। उपासनासम्बन्धी दर्शनशास्त्रका सिद्धान्त यह है कि, भावशुद्धि द्वारा किये हुए असत् कर्मसे भी पुण्यकी प्राप्ति होती है। दूसरी ओर वह दर्शन यह सिद्ध करता है कि, ईश्वरस्मरणपूर्वक ईश्वरमें समर्पित कोई कर्म भी हो, उससे धर्मका फल प्राप्त होगा। कर्ममीमांसाशास्त्र यह हाथ उठाकर सिद्ध करता है कि, सकामकर्म यदि विधिपूर्वक किया जाय, तो उससे संस्कारशुद्धि होकर क्रमशः प्रवृत्तिका निरोध होता है और प्रथम दशामें अभ्युदय तथा अन्तिम दशामें निःश्रेयसकी प्राप्ति होती है। सनातनधर्मकी मूलभित्तिरूप वर्णाश्रम-शृंखलामें इसी सिद्धान्तका ज्वलन्त दृष्टान्त सर्वथा मिलता है। ब्रह्मचर्यआश्रम प्रवृत्तिको सिखाता है और गृहस्थाश्रम प्रवृत्तिमार्गकी चरितार्थता करता हुआ सब आश्रमोंका आश्रयस्थल और सबसे बड़ा कहलाता है। उस वृद्ध आश्रममें रहता हुआ गृही प्रवृत्तिमार्गकी शास्त्रोक्त चरितार्थता करता हुआ, प्रवृत्तिमें विचरता हुआ, इन्द्रियादिको शास्त्रविधिसे सेवन करता हुआ, अन्तमें अपने आप ही निवृत्तिका अधिकारी बन जाता है। सिद्धान्त यह है कि, निरङ्कुश होकर प्रवृत्ति करनेसे अवश्य पतन होता है, परन्तु वेद, शास्त्र, गुरु और आचार्यके आज्ञाधीन रहकर जो बिहित प्रवृत्ति की जाती है, उससे अपने आप ही निवृत्ति आ जाती है। दूसरी ओर यह तो स्वतःसिद्ध है कि, प्रकृति और प्रवृत्तिके विरुद्ध यदि

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

किसीको साधनमार्ग बताया जाय, तो उसमें अवश्य विफलता होती है। एक विषयलोलुप व्यक्तिको यदि कोई संन्यासधर्मका उपदेश देने लगे, तो उसका वह उपदेश पत्थरपर बीज बोनेके समान हो जाता है। घोर विषयोंमें आसक्ति, परदाररति, मद्यपान आदि दोषोंसे युक्त, धनदुर्मदान्ध किसी राजासे यदि इन सब प्रवृत्तियोंका छोड़कर एकाएक सात्विक आचार आदिके पालन करानेका प्रयत्न किया जाय, तो उसमें विफलता अवश्य होगी। इस कारण विषय-भोगमें रत व्यक्तियोंके कल्याणार्थ प्रवृत्तिमें निवृत्तिका पथ दिखानेके लिये निगम और आगममें अनेक निवृत्तिमूलक प्रवृत्तिमार्गोंकी योजना की गयी है। इस कारण हिंसामूलक यागयज्ञादिके विषयमें कोई शङ्काका अवसर नहीं है। यागयज्ञादिके द्वारा दैवीजगत्के साथ साधकका सम्बन्ध हो जाता है। इसी प्रकार यागयज्ञआदिमें हननीय पशु आदिका भी दैवीजगत्से सम्बन्ध हो जाता है। इस कारण एक ओर यागयज्ञादिकी क्रियाओंद्वारा प्रवृत्तिमें चलता हुआ यजमान निवृत्तिभूमिमें पहुंच जाता है और दूसरी ओर यागयज्ञादिमें जिनका बलि होता है, वे जीव भी दैवी सहायतासे अपेक्षाकृत उन्नत-भूमिमें पहुंच जाते हैं। इस कारण यह भी मानना पड़ेगा कि, वैदिक वैधीहिंसा दोनों ओर अभ्युदयकारी होनेसे वह हिंसा हिंसा नहीं, अहिंसा है। इस कारण कर्मके ज्ञाता आचार्य और गुरु जिस व्यक्तिके संस्कारोंको प्रवृत्तिमूलक

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

समझते हैं, उनको प्रवृत्तिमार्गमें पहिले चलाकर तब निवृत्ति-भूमिमें पहुंचाते हैं। इस विचारके अतिरिक्त विदेह महाराजा जनकने जो निष्काम होकर यज्ञ करनेके मतका समर्थन किया है, वह तो स्वतःसिद्ध है। वासनारहित होकर केवल कर्तव्यबुद्धिसे ज्ञानी व्यक्ति जो यागयज्ञ करते हैं; यहांतक कि, जिस किसी कर्मका अनुष्ठान करते हैं; वह उनके बन्धनका कारण नहीं हो सकता। क्योंकि बन्धनका कारण वासना है, स्थूलकर्म नहीं है। परन्तु दूसरी ओर सकामकर्मसे वेदका कर्मकाण्ड भरा हुआ है। उसका समाधान अवश्य होना चाहिये। पूर्वकथित विचारमूलक विज्ञानसे विचारशील व्यक्ति वैदिक सकामकर्मकी भी उपयोगिता हृदयङ्गम कर सकेंगे। सकाम विहितकर्म प्रथम अवस्थामें अभ्युदय कराकर क्रमशः साधककी सत्वशुद्धि कराता हुआ अन्तमें उसको निश्रेयस भूमिमें पहुंचा देता है; यह जो वेदके कर्मकाण्डका निगूढ़ सिद्धान्त है, उसका महत्व पूर्वकथित विचारोंसे प्रतिपन्न होता है।

जिज्ञासु जितना उन्नत अधिकारी होता है, उतने ही थोड़े शब्दोंमें उसकी शङ्काओंका समाधान हो जाता है। इस गाथामें जिज्ञासु महात्मा शुक उन्नत अधिकारी थे, इस कारण उनकी सब शङ्काओंका समाधान विदेह महाराजा जनकने नहीं किया था। दूसरी ओर अतिसूक्ष्मरीतिसे समाधान करते ही उन्नत अधिकारी महात्मा शुकका समाधान हो गया

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

था। इस कारण इस गाथामें सब शङ्काओंका समाधान हुआ न देखकर किसीको कुछ सन्देह करनेकी आवश्यकता नहीं है। सर्वसाधारणके कल्याणके लिये महात्मा शुकदेवकी प्रत्येक शङ्काका आवश्यकीय समाधान किया जाता है। इच्छा मनका धर्म है। आहार, निद्रा, भय, मैथुन, ज्ञान और सुखेच्छा ये जीवमात्रकी स्वाभाविक वृत्तियां हैं। इनसे रहित कोई हो नहीं सकता। ज्ञानी और अज्ञानी दोनोंमें ही इच्छा-वृत्तियां न्यूनाधिक प्रमाणसे उठती रहती हैं। परन्तु ज्ञानी और अज्ञानीमें भेद इतना ही है कि, अज्ञानीकी इच्छाके मूलमें वासनाका जाल बना रहता है और ज्ञानीकी इच्छा उसकी प्रकृति और प्रवृत्तिके अनुसार स्वतः उठती रहनेपर भी उसकी हृदयगुहामें वासनाका सम्बन्ध न रहनेसे उसकी इच्छा भित्तिशून्य रहती है। अविद्यासे अस्मिताका उदय होता है। अस्मितासे रागद्वेष उत्पन्न होता है और रागद्वेषसे अभि-निवेशकी नींव दृढ़ होकर वासनाजालमें साधारण जीव लिप-टते रहते हैं। आत्मज्ञानी व्यक्तिको जब स्वस्वरूपका अनुभव होता है, तो उसको आत्मा और अनात्माका स्वानुभव प्राप्त हो जाता है। उस समय जड़में चेतन और चेतनमें जड़, सत्‌में असत् और असत्‌में सत् अनुभव करानेवाली अविद्या-का स्वरूप वह देख लेता है। तब अविद्या ऐसे स्वस्वरूपमें स्थित व्यक्तिके अन्तःकरणको प्रभावित नहीं कर सकती और ऐसी दशामें प्रकृतिके अनुसार उसके अन्तःकरणमें वृत्तियां

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

उठती रहने पर भी वह अपनी मनोवृत्तियोंको प्रकृतिजनित और राग, द्वेष, अभिनिवेशको अविद्याजनित समझ लेता है। ऐसे स्वस्वरूपमें स्थित व्यक्तिके अन्तःकरणमें वासना भर्जित-बीजके समान हो जाती है। सुतरां वह जगन्मङ्गलकर और स्वप्रकृतिजनित स्वाभाविक वासना न वासना कहाती है और न वह उस महापुरुषपर प्रभावही डाल सकती है। मन्त्रयोग, हठयोग, लययोगरूपी क्रियायोग, तीनोंमें ही चित्तवृत्तिनि-रोधका कौशल अवश्य रक्खा है; परन्तु वह साधनकी प्रथमावस्था है। उससे मन बलवान् होता है और सविकल्प-रूपी क्षणिक समाधिकी प्राप्ति होती है। निर्विकल्पसमाधिरूपी राजयोगकी समाधि वही कहाती है, जो विकल्पशून्य और सब अवस्थाओंमें एकरस रह सके। दूसरी ओर जबतक मन है, तबतक मनोवृत्तियां रहती हैं। इस कारण निर्विकल्प अवस्था तभी सम्भव हो सकती है, जब राजयोगीकी मनो-वृत्तियोंके रहते हुए भी वह मनोनाशका अधिकारी बन जाय और उसका मन वृत्तिमय रहता हुआ भी उसको बांध न सके। यह अवस्था सहज है। स्वस्वरूपमें स्थित राजयोगी इसी कारण आत्माको स्पर्श करते हुए, सब काम करते हुए भी, सब कामोंसे निर्लिप्त रहते हैं। कर्मकी गति और कर्मोंका विपाक अति दुर्ज्ञेय है। चाहे देवता हों, चाहे मनुष्य; सबके साथ जाति, आयु, भोग, प्रकृति, प्रवृत्ति, शक्ति और कर्मबीज-रूपी संस्कार, ये सातों लगे रहते हैं। इस कारण महाराजा

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

निमि और महर्षि वशिष्ठका साधारण विषयासक्त व्यक्तियोंकी रीतिपर परस्परपर आक्रमण करना असम्भव नहीं है और दूसरी ओर देहका पतन होते होते दूसरेको शाप देना भी असम्भव नहीं है। यह तो लोकप्रसिद्ध ही है कि, सिर कट जानेपर भी कबन्ध युद्ध किया करते हैं। इस कारण शरीर गिरते गिरते अन्तःकरणकी क्रिया हो सकती है। महात्मा बालक शुककी इस विषयकी शंका निर्मूल है। कर्मपारदर्शी मुनि वे ही हो सकते हैं कि, जो कर्मकी क्रिया और प्रतिक्रिया, कर्म और उसके फल, कर्मरूपी वृक्ष और संस्काररूपी बीज और इनके पूर्वापरसम्बन्धका रहस्य अपनी समाधिगम्य बुद्धिके द्वारा समझ सकें। महात्मा बालक शुक पूर्वजन्मार्जित कर्मफल द्वारा विषयविरागी, तत्वज्ञानी और ब्रह्मनिष्ठ अवश्य थे; परन्तु वे अपने पूर्वकर्मसे उत्पन्न प्रकृति और प्रवृत्ति, भविष्यत् भोग और प्राचीन संस्कार आदिसे अभिज्ञ नहीं थे। भगवान् व्यास इन सबसे अभिज्ञ थे और आत्मज्ञानी विदेह जनक इन विषयोंको समझ सकते थे। उनकी शक्तिको भी भगवान् व्यास जानते थे। दूसरी ओर पितापुत्रसम्बन्ध होनेसे उपदेशका फल सुगमतासे प्रकट होना सम्भव न होनेके कारण महात्मा पुत्रको उन्होंने अपने शिष्य विदेह जनकके निकट भेजा था। यह भगवान् व्यासके कर्मज्ञानका ही निदर्शक था।

इस कथामें प्रवृत्ति और निवृत्तिमार्गके युद्धमें प्रवृत्ति-मार्गका जय होना और सांख्ययोग तथा कर्मयोगके

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

वैज्ञानिक युद्धमें कर्मयोगका जय होना पाया जाता है। साथही साथ भगवान् व्यास जैसे अवतारिक महर्षिका शुभ चरित्र पुत्रजनित मोहके द्वारा रंजित हुआ है। इन सब शंकाओंका निराकरण करना आवश्यक समझा जाता है। यह तो शास्त्रसे सिद्ध है कि, प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग दोनों ही पूर्ण बलशाली हैं और दोनों साधकको निःश्रेयस-भूमिमें पहुँचा देते हैं। इसी कारण दर्शनशास्त्रोंने और वेदके उपनिषद्भागने प्रवृत्तिमार्गके द्वारा शुक्लगति और निवृत्तिमार्गके द्वारा सहजगति बताकर दोनोंके द्वारा ही मुक्तिकी प्राप्तिका निर्देश किया है। प्रवृत्तिमार्गमें चलता हुआ कर्मयोगी बड़े बड़े याग-यज्ञ और महायज्ञोंका साधन करता हुआ क्रमशः पूर्णरूपसे निष्काम होकर शरीरका अन्त होनेपर शुक्लगतिके द्वारा सप्तम ऊर्द्ध्वलोकमें पहुंचकर सूर्यमण्डल भेदन करता हुआ निर्वाणरूपी मुक्तिपदको प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार आत्मज्ञानी निर्विकल्पसमाधिमें स्थित, स्वरूप-स्थित, राजयोगी इस शरीरके रहते हुए सहजगतिरूपी जीव-न्मुक्तिको प्राप्त करके ब्रह्मरूप हो जाता है। सहजगतिके द्वारा जो अवस्था प्राप्त होती है, शुक्लगतिके द्वारा भी वही अवस्था प्राप्त होती है। इस कारण सांख्ययोग और कर्मयोग दोनों ही मुक्तिप्राप्तिके कारण हैं। अतः निवृत्तिमार्ग और प्रवृत्तिमार्ग दोनोंही साधकको प्रथम अवस्थामें अभ्युदय और दूसरी अवस्थामें निःश्रेयस प्रदान करनेकी शक्ति रखते हुए भी दोनों-

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

का वैचित्र्य पृथक् पृथक् है। निवृत्तिमार्ग पहिलेसे ही विषयोंमें वैराग्य सिखाता है, परन्तु प्रवृत्तिमार्ग विषयोंको भोग कराता हुआ सुकौशलपूर्ण साधनोंसे विषयोंके सम्मुख रहते हुए भी विषयवासनाका नाश कराके साधकोंके अन्तःकरणोंको निर्विषयी बना देता है। वेदका समस्त प्रवृत्तिमार्ग और वेदका समस्त कर्मकाण्ड इस प्रकार विषयसम्बन्धयुक्त रहनेपर भी उत्तरोत्तर सत्वशुद्धिके द्वारा वासनाका क्षय कराके साधकको परमपदकी प्राप्ति करा देता है। दूसरी ओर सांख्ययोग योगीको जिस निःश्रेयसभूमिमें पहुंचाता है, कर्मयोग भी उसी निःश्रेयसभूमिमें पहुंचा देता है। श्रीमद्विष्णुभागवतके शुकदेव सांख्ययोगके अवलम्बनसे जैसे ब्रह्मसायुज्यको प्राप्त हुए थे, श्रीदेवीभागवतके शुकदेव भी कर्मयोगी बनकर उसी ब्रह्मसायुज्यको प्राप्त हुए थे। एकही शुकदेवके दो चरित्र होनेका कारण यह है कि, मन्वन्तरभेद अथवा कल्पान्तरभेदसे शुकदेवका चरित्र रूपान्तरको धारण किया करता है। ये शुकदेवकी दो कथायें दो मन्वन्तरों अथवा दो कल्पोंकी हैं और दोनों योगोंकी मौलिकता सिद्ध कर रही हैं। परन्तु कर्मयोगकी विचित्रता इतनी ही है कि, इसमें कर्म करता हुआ भी साधक कर्मसे रहित हो जाता है। इसकी विशेषता यह है कि, सांख्ययोगमें यदि साधक विषयवैराग्यकी सहायतासे प्रथम अवस्थामें बाहरसे अपनी इन्द्रियोंको रोककर कर्मका त्यागही कर दे और भीतरसे वासनारहित न हो

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

सके, मानसिक कर्म करता रहे, तो वह मिथ्याचारी हो जायगा। उसमें अकर्म-अवस्थाकी प्राप्ति सम्भव नहीं होगी। कर्मयोगकी अवस्थामें ऐसे भयकी सम्भावना नहीं है। कर्मयोगी पहिलेसे ही वासनात्याग करता हुआ कर्मका अनुष्ठान करता रहता है। इससे क्रमशः उसका अन्तःकरण वासनारहित हो जाता है। वासनारहित होकर जो कर्म होता है, उससे बन्धन न होनेके कारण वही अवस्था ठीक ठीक अकर्मकी अवस्था कही जा सकती है। जीवन्मुक्त महाराजा जनकने सूत्ररूपसे इसी त्रिलोकपवित्रकारी कर्मयोगका सिद्धान्त महात्मा शुकसे कहा था। भगवान् व्यासका भी अपने पुत्रको यही उपदेश था; परन्तु मोहके कारण महात्मा शुक पितामें गुरुबुद्धि नहीं ला सके। अन्तमें महाराजा जनकके पास पहुँचकर पितापुत्रजनित मोहसे दूर होकर इस विज्ञानका रहस्य समझ सके थे और कर्मयोगसेवित प्रवृत्तिमार्गका अवलम्बन करते ही अन्तमें शुक्लगतिको प्राप्त करके ब्रह्ममें लीन हो गये थे। अतः श्रीमद्भगवद्गीतामें कथित कर्मकौशल और वेदोक्त प्रवृत्तिमार्गकी मनोहारी विचित्रता तथा कर्मयोगके महत्व और प्रवृत्तिमार्गकी सर्वोपकारिताके प्रतिपादनके लिये ही इस परकीयभाषामयी गाथाका यहां वर्णन किया गया है। वेदोंमें और पुराणोंमें लोकशिक्षाके लिये जो गाथाएँ आती हैं, उनको मुनिगणने पांच भागोंमें विभक्त किया है। (१) कल्प कल्पान्तकी यथार्थ जीवनी; जैसी यह गाथा है।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

( २ ) दैवीसृष्टिका वंशवर्णन; जैसे सूर्यचन्द्र आदिका वंशवर्णन । ( ३ ) लौकिक राजवंश और ऋषिवंशका इतिहास; जैसा महाभारत और रामायण । ( ४ ) लौकिक भाषामें अध्यात्मतत्वोंका गाथारूपसे वर्णन; जैसी दार्शनिक कल्पनाएँ । ( ५ ) आधिभौतिक दैवीरहस्यका आध्यात्मिकरूपसे वर्णन । कहीं कहीं इनका सम्मिश्रण भी पाया जाता है । श्रीभगवान् वेदव्यासके मोहका कारण श्रीदेवीभागवत जैसे महापुराणके विज्ञानके सम्मुख विस्तृतरूपसे कहनेकी आवश्यकता नहीं है । अनन्तकोटिब्रह्माण्डभाण्डोदरी जगज्जननीकी अतुलनीय और अपार मोहशक्तिके द्वारा सारा संसार व्याप्त है । कोई भी उस मोहशक्तिसे जयी नहीं हो सकता है । पूर्णावतार भगवान् श्रीकृष्णने महाभारतके युद्धमें मित्रके क्लेशको देखकर मोहित होकर शस्त्रधारण कर लिया था । भगवान् रामचन्द्र सीतावियोगसे मोहित हुए सबको दिखायी दिये थे । ब्रह्मा, विष्णु, महेशतकका मोह पुराणोंमें विवृत है । फिर यदि महात्मा शुक पिता-पुत्रसम्बन्धसे पितापर अश्रद्धालु होकर मोहित हो जांय और उनका उपदेश न मानें और एक राजाका उपदेश मान लें; दूसरी ओर यदि भगवान् व्यासदेव पुत्रवियोगसे मोहित होकर कातरता प्रकाशित करें, तो अधिक बात क्या है ? महामायाका अलङ्घनीय प्रभाव ही इसका कारण है, जो केवल उनकी कृपासे ही दूर होता है ।

---

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

# पुस्तक-मालाएँ ।

श्रीभारतधर्ममहामण्डल तथा उससे सम्बन्धयुक्त संस्थाओं द्वारा निम्नलिखित पुस्तकमालाएँ निकलती हैं:—

(१) निगमागमग्रन्थमाला। (२) धर्मकल्पद्रुम-ग्रन्थ-माला। (३) वाणी-पुस्तक-माला। (४) आर्यमहिला-पुराण-माला। (५) सूर्योदय-संस्कृतग्रन्थमाला। (६) बंगला-ग्रन्थमाला। (७) अंग्रेजी ग्रन्थमाला। (८) महामण्डल पुस्तिका-माला।

इन मालाओंके ग्राहक होनेमें श्रीमहामण्डलके स्थायी सभ्योंको विशेष सुभीता रक्खा गया है। नियम मंगाकर पढ़नेकी कृपा करें।

प्रवन्धक—

भारतधर्म सिण्डिकेट, लिमिटेड,

वनारस।

# समाज-हितकारी-कोष ।

श्रीमहामण्डलके सभ्योंको गमी और शादीके अवसरपर ५००) तक आर्थिक सहायता देनेके लिये यह कोष खोला गया है। इसके नियम बड़े ही सुगम हैं। उन्हें जाननेके लिये पत्र-व्यवहार करें।

सेक्रेटरी—

श्रीभारतधर्ममहामण्डल,

जगतगंज, वनारस।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

# भारतधर्म ।

सनातनधर्मावलम्बियोंका सर्वोपयोगी हिन्दी-अंग्रेजी (द्वैभाषिक) मासिकपत्र। महामण्डलके सभ्योंको विना मूल्य मिलता है।

# सूर्योदय ।

संस्कृत-विश्व-विद्यालयका विविधविषयविभूषित संस्कृत मासिक पत्र। संस्कृतप्रेमियोंका यही एकमात्र प्यारा पत्र है।

# आर्यमहिला ।

वर्णाश्रम धर्मियोंके महिला-समाजकी सेवा करनेवाला हिन्दीमें इससे बढ़कर कोई सर्वाङ्गसुन्दर मासिक पत्र नहीं है। इसके साथ पुराणमाला भी प्रकाशित होती है और यह पत्र आर्यमहिलामहापरिषद्के सभ्योंको विनामूल्य दिया जाता है।

तीनों पत्रोंके लिये इस पतेपर पत्रव्यवहार करना चाहिये—

अध्यक्ष—

श्रीभारतधर्ममहामण्डल,

जगत्गंज, बनारस।

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Bharat Dharma Mahamandal Collection. Digitized by eGangotri